अधमोद्धारक ॥

प्रजानाथ परमेश्वर की प्रेरणा से पण्डित रमादत्त त्रिपाठी मन्त्री आर्य्यसमाज नैनीताल ने लोकोपकारार्थ स्वर्गवासी महर्षियों के वाक्यों का सारसंग्रह किया ॥

और

पं० अम्बिकादत्त बहुगुणासरिश्तेदार अदालत असिस्टेन्ट कमिश्नरी नयनीताल तथा पं० शंकरनाथ शुक्ल शास्त्री ब्रह्मावर्त्त निवासी आदि द्रष्टा श्रोता सज्जनों के परामर्श से ॥

सरस्वतीयन्त्रालय-इटावा

में

भीमसेनशर्मा द्वारा छपाया

संवत् १९५४ वि० ता० १३ । ३ । ९८ ई०

प्रथमवार ५००] [मूल्य ।)

सूचीपत्र

विषय वा गुणानुवाद

रमादत्त त्रिपाठी

ओ३म् परमात्मने नमः ॥

भूमिका अर्थात् पुस्तक रचने का प्रयोजन ॥

जैसे किसी वस्तु के गुण का बोध–रूप देखने से, किसी का चखने स्वाद लेने से, किसी का स्पर्श करने छूने थामने से, किसी का नाक द्वारा गन्ध लेने सूंघने से होता है तैसे ही इस पुस्तक का भी गुण पढ़ने सुनने पूछने शोचने विचारने वर्तने से ही ज्ञात होगा। और यह भी विदित हो कि यह पुस्तक जिज्ञासु कुलीन पुरुषों को विना दाम लिये पुण्यार्थ भी दिया वा सेवा में भेजा जाता है, लेकर पाकर जो कोई मनुष्य व्यक्तिविशेष जनसमुदाय को नहीं सुनावेगा नष्ट भ्रष्ट करेगा वह ग्रन्थकर्त्ता दाता के पाप कर्मों का भागी होगा। और जो सर्वहितैषी सज्जन इस के अनुसार ईश्वराज्ञा पालन रूप लोकोपकार करे, करावेगा वह प्रजानाथ परमेश्वर की कृपा से वैकुण्ठ (सुखधाम) और मुक्तिपद अवश्य पावेगा। (तृपिसर) नयनीताल निवासी पार्श्ववर्त्ती लोग जिन्हों ने मेरे (ग्रन्थ कर्त्ता के) सरल रूप को देखा है (नेड़े का जोगी दूर का सिद्ध) इस कहावत के अनुसार इस पुस्तक को तुच्छ समझेंगे परन्तु विदेशीय गुणज्ञ पाठक अधिक प्रशंसा प्रतिष्ठा करेंगे और ५०० वर्ष पीछे यह पुस्तक भी साधारण लोगों की दृष्टि में भगवद्वाक्य के नाम से माना पुकारा जायगा, जैसे आजकल १८ पुराण उपपुराण बायबिल कुरान आदि माने जाते हैं ॥

विद्यावान् बुद्धिमान् नैय्यायिक सज्जन निष्पक्ष होकर प्रत्येक मत मतान्तरीय मज़हबी किताबों से इस पुस्तक की तुलना विवेचना कर लेवें इस में कोई बात न्याय नीति विरुद्ध नहीं पावेंगे ॥

कितने ही अनार्य अविवेकी इस पुस्तक को सुन कर हास्य और निन्दा भी करेंगे जब कि दुर्जन लोग ईश्वर को भी दोष देते हैं तो मनुष्य किस गणना में है। ऐसा गुण संसार में कोई भी नहीं देखा जाता जिस को हिंसक निन्दक दोष न देते हों इस स्थान पर नीतिज्ञ श्रीविष्णु शर्मा जी का वाक्य स्मरण आता है ॥

प्रायेणात्र कुलान्वितं कुकुलजाः श्रीवल्लभं दुर्भगा-
दातारं कृपणा ऋजूननृजवो वित्ते स्थितं निर्द्धनाः ।
वैरूप्योपहताश्च कान्तवपुषं धर्माश्रयं पापिनो-
नानाशास्त्रविचक्षणं हि पुरुषं निन्दन्ति मूर्खाः सदा ॥१॥

(कुलान्वितं कुकुलजाः) प्रत्यक्ष देखिये बहुधा यत्र तत्र कुलीन आर्य आप्त पुरुषों की अनार्य अकुलीन अनाचारी नीच म्लेच्छ निन्दा किया करते हैं (श्रीवल्लभं दुर्भगाः) श्रीमान् भाग्यवान् मनुष्यों की आलसी अभागे कंगाल मंगिता

बुराई करते हैं ॥ किसी अनादर पाये भिक्षुक का वाक्य है कि ऊंट का सुई के नाके (छिद्र) होकर निकल जाना तो सहज है पर धनवानों का बैकुण्ठ जाना कठिन है (दातारं कृपणाः) उदार चरित दाता त्राता सज्जनों की प्रवृत्ति प्रकृति देख कर कृपण सूम कंजूस मक्खीचूस दुर्जनों की चित्त वृत्ति खिन्न उद्विग्न हो जाती है। (ऋजूननृजवः) सीधे सादे सच्चे संन्यासी धर्मोपदेशक महापुरुषों की कार्यवाही देखकर टेढ़े बांके पापी पाखण्डी वेषधारी वेदविरोधी लालबुझक्कड़ विद्याफक्कड़ हुडंगरों को जलन उठा करती है। (वित्ते स्थितं निर्द्धनाः) वित्तवान् सम्पत्ति-मान् प्रतिष्ठावान् परिश्रमी दूरदर्शी अग्रशोची जनों के घर द्वार की शोभा देख निर्धन निर्लज्ज निरुद्यमी निर्गुणियों के नेत्रों में चकाचौंध होती है जैसे सूर्य की किरणों से उल्लू (घुघुआ) को (विरूपैरुपहताश्च कान्तवपुषम्) रूपवान् कान्तिमान् शीलवान् बलवान् जितेन्द्रिय धार्मिक पुरुषों के बल वीर्य पराक्रम तेज को देख कर कुलक्षण कुलाङ्गार कुरूप व्यभिचारी पापरोगी दुर्बलों का हृदय विदीर्ण होताहै (नानाशास्त्रविचक्षणं हि पुरुषम्) वेद वेदांगादि षट्शास्त्र दर्शनशास्त्र धर्मशास्त्रपठित विद्यारत्नजटित विचक्षण विपश्चित् विद्वान् आर्य महाशयों की कथा वार्त्ता शिक्षा दीक्षा सुनकर मूर्ख धूर्त निरक्षर भट्टाचार्य गुरुघंटाल जा-त्यभिमानी कुलाभिमानी सण्डे मुसण्डे गुण्डे लुच्चे टुच्चे सदा निन्दा किया करते हैं इसी प्रकाशान्धकारवत् विरोध का नाम देवासुर संग्राम है। जब दुष्ट अपनी दुष्टता में नहीं चूकते तो शिष्ट अपनी शिष्टता में क्यों चूकें? यह भी इस पुस्तक के रचने का प्रयोजन है ॥

और कितने ही पाठक मित्रों को यह शङ्का उत्पन्न होनी सम्भव है कि इस में लिखी वार्ता शिक्षा दीक्षा तो सब पुरानी ही हैं हमने मनुस्मृति धर्मशास्त्र सत्यार्थप्रकाश आर्यसिद्धान्त आदि पुस्तकों में देखी और उपदेशक सज्जनों के मुख से सुनी भी हैं तो फिर इस पुस्तक के गढ़ने बनाने से क्या विशेषता पाई गई जो ग्रन्थकर्त्ता अपने ताईं अवतार आचार्य (पैगम्बर नबी) होने कासा अ-भिमान जताता है ॥

इस का समाधान यह है कि पूर्वज ग्रन्थकार नबियों ने भी गुरुमुख से सुन के ही साधारण बुद्धि वाले लोगों के हितार्थ पुस्तक निर्माण किये हों गे बिना बीज खेती हो ही नहीं सकती जांगलिक (जंगली) लोगों के पास विद्या का बीज न जाने से अब तक मूर्ख होते चले आते हैं ॥

किसी धर्मशाला बनाने वाले ने पत्थर मट्टी लोहा काष्ठ नहीं बनाया किन्तु उन सब को विधिपूर्वक जोड़ा है तो भी लोग कहते हैं कि अमुक की धर्मशाला है। इसी प्रकार मैंने भी लोकोपकारार्थ विशेषतः परमेश्वर तथा धर्म के खोजी जनों के उद्धारार्थ निस्तारार्थ विशारद वाक्यों का सारसंग्रह किया है ॥

विदेशीय भाषा जानने वाले देश हितैषी विद्वान् आर्य पुरुष इस पुस्तक को नयपाली गुजराती काश्मीरी बंगाली अंगरेजी फारसी में भी उल्था कर के मुद्रित करा देवेंगे तो उन सज्जनों को अपना सहायक जान कर सन्तोष करूं-गा। और धन्यवाद आशीर्वाद दूंगा॥

यदि सर्कार गवर्नमेण्ट की आज्ञा से यह पुस्तक भारतवर्ष भर के पाठ-शालाओं में पढ़ाया जाय तो परमेश्वर का भय और न्याय सब के हृदय में समाजाने से प्रजा के बीच परस्पर उपद्रव मार पीट चोरी आदि विघ्नों की शान्ति हो जाय जितना उपकार धर्मोपदेश तथा पुस्तक द्वारा होता है उतना बलात्कार शासन ताड़न द्वारा नहीं हो सकता॥

इस पुस्तक में ७ अध्याय नियत किये हैं जिन का विषय व्योरेवार प्रथम छपे सूचीपत्र से ज्ञात होगा॥

मङ्गलाचरण

ओ३म्–गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनां-त्वा निधिपतिꣳ हवामहे?वसोमम। आह-मजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥

यह यजुर्वेद के अध्याय २३ का १९ वां मन्त्र है।

हे परब्रह्म परमेश्वर! आप जड़ चेतन स्थावर जंगम गण के अध्यक्ष हैं इस लिये आप को गणपति नाम से उच्चारण करता हूं। हे प्रजानाथ विश्वनाथ! आप प्रिय पदार्थों के उत्पादक पालक हैं, इसी कारण प्रियपति नाम से पुकारता हूं। हे यमराज संम्राट् विराट्? आप विद्या बुद्धि सन्तति सम्पत्ति आदि निधियों के दाता त्राता हैं अतएव निधिपति नाम से ग्रहण करता हूं। हे वसो शिव शम्भो! आप सब में वसने वाले सर्वव्यापक हैं तथा प्रकृति रूप बीज गर्भ से जगत् की उत्पत्ति स्थिति प्रलय करने वाले सर्वशक्तिमान् हैं। इस लिये वसु नाम से उपासना करता हूं। हे जगद् गुरो! आप की करुणा प्रेरणा से ही यह पुस्तक गोवधादि महा अनर्थ हारक पापरूपमत विध्वंस कारक सर्वत्र सद्धर्म प्रचारक असुर दल विदारक होवे॥ (प्रार्थना)

ओ३म्–तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्य्य-

मसि वीर्य्यं मयि धेहि। बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि। मन्युरसि मन्युं मयि धेहि। सहोऽसि सहो मयि धेहि॥

यजु० अ० १९ का मन्त्र ९

(तेजोऽसि तेजोमयि धेहि) हे परमेश्वर परब्रह्म परमात्मन्! आप प्रकाशस्वरूप तेजःस्वरूप हैं कृपा करके मेरे हृदय में भी ज्ञानस्वरूप प्रकाश कीजिये। आप के दिये हुए तेज से धूर्त कल्पित पाखण्ड जालरूपी अनेक प्रकार के अविद्यान्धकार का नाश करके वैदिक सत्य सनातन विद्यार्क प्रकाश कर तथा करा सकूं। (वीर्य्यमसि वीर्य्यं मयि धेहि) हे जगदीश्वर विश्वम्भर! आप अनन्त वीर्यवान् पराक्रमी हैं अपनी करुणा से मुझ को भी ऐसा पराक्रम दीजिये कि जिस से बड़े २ दैत्य दानव असुर राक्षस निर्दय यक्ष रक्ष पिशाच जाति का निर्मूल करके आप की स्थावर जंगम प्रजा का विधि पूर्वक पालन शासन कर सकूं। (बलमसि बलं मयि धेहि) हे अनन्त बलेश्वर विश्वेश्वर! अपने अनुग्रह से मेरे आत्मा और शरीर में ऐसा उग्र बल दीजिये कि जिस से बड़े २ कठिन गुप्त विषय भूत वर्त्तमान भविष्यत् कालीन लोक व्यवहार आप की व्यवस्था मर्यादा को जान कर अनर्थकारी विघ्नाचारी भयानक जन्तुओं को मार मिट्टी में मिला दूं। (ओजोऽसि ओजो मयि धेहि) हे सर्वशक्तिमन् भगवन्! आप अतुल अनुपम ऐश्वर्य वाले हैं अपनी अनुकम्पा से मुझ को भी ऐसा पूर्ण ऐश्वर्यवान् कीजिये जिस से मेरे राज्य तथा देश में कहीं कोई जीव जन्तु भूखा प्यासा न रहे किन्तु सब भरे पूरे होवें। (मन्युरसि मन्युं मयि धेहि) हे दुष्टों पर क्रोध करने न्यायानुकूल दण्ड देने हारे यमराज सम्राज! छली कपटी स्वार्थी चोर डांकू चाण्डाल सिंह व्याघ्र आदि घातक बाधक जन्तुओं को यथोचित दण्ड देने का अधिकार मुझ को भी दीजिये। (सहोऽसि सहो मयि धेहि) हे सहनशीलेश्वर सर्वेश्वर! लोकोपकार निमित्त सर्दी गर्मी भूख प्यास मान अपमान हर्ष शोक सहने वाला तथा उद्यम साहस धैर्य बल बुद्धि पराक्रम के साथ धर्म का जीर्णोद्धार करने वाला इसी देह से इसी जन्म में मुझ को शीघ्र कीजिये। हे ओङ्कारनाथ प्रजानाथ जगद्गुरो परमकृपालो! आप सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी आदि असंख्य अनन्त विशेषण युक्त हैं आप की प्रेरणा से सब मनुष्य केवल आप के ही उपासक उपदेशक सेवक होवें॥ ओ३म् शान्तिः ३

उत्साही पुरुष शौचादि से निवृत्त होकर प्रातः सायं (तेजोसीति) इस वेद मन्त्र का पाठ और जप अवश्य किया करें॥

ओ३म् जातवेदसे नमः

प्रथमाध्याय ईश्वरीय ज्ञानविषय

परमेश्वर—अखिलेश्वर, अनुपम, अगोचर, अलक्ष्य, अद्वितीय, अच्छेद्य, अभेद्य, अजन्मा, अमृत्यु, अनादि, अनन्त, असीम, अच्युत, अव्यक्त, असहाय, अव्यय, अक्षय, अग्राह्य, अतुल और अमूल्य है॥

„———सर्वज्ञ सर्वाधार सर्वान्तर्यामी सर्वसाक्षी सर्वशक्तिमान् सर्वाध्यक्ष सर्वनियन्ता सर्वोत्पादक सर्वव्यापक सर्वेश सर्वरक्षक सर्वद्रष्टा सर्वस्रष्टा सर्वाधिवास है॥

„———निराकार निराधार निर्विकार निरहंकार निर्लेप निर्वैर निर्द्वन्द्व निश्शंक निर्भ्रम निर्दोष निरीह निरालस्य निष्कम्प निरालम्ब निरामय निष्पक्ष निष्पाप निरञ्जन निर्मल है॥

„———परब्रह्म परोपकारी परमात्मा परमपुरुष परमपिता परमानन्द परममित्र परमेश परेश परमोदार है॥

„———जगद्गुरु जगत्कर्त्ता जगदाधार जगत्स्वामी जगदीश्वर जगच्चक्षु जगत्पिता जगत्पालक जगन्नाथ जगत्प्रकाशक जगदुद्धारक जगन्नारायण जगन्निमित्तकारण और जगन्मित्र है॥

„———तेजःस्वरूप ज्योतिःस्वरूप अमृतस्वरूप ज्ञानस्वरूप आश्चर्यस्वरूप कालस्वरूप रुद्रस्वरूप यमस्वरूप न्यायस्वरूप सत्स्वरूप चित्स्वरूप आनन्दस्वरूप है॥

„———नित्यतृप्त नित्यजागृत नित्यमङ्गलमय नित्यन्यायकारी नित्यमुक्त नित्ययुवा नित्यचैतन्य नित्यशुद्ध नित्यबुद्ध नित्यएकरस नित्यपूर्ण है॥

„———अणु से भी अणु महान् से भी महान् है जिस के खण्ड नहीं हो सकते इसी लिये कहा है (अणोरणीयान्महतो महीयान्)॥

„———किसी मूर्त्तिमान् जन्तु वा पदार्थ के समान नहीं है जो आंखों से देखा हाथों से थांवा पकड़ा जावे इस लिये अग्राह्य कहा है।

„———किसी की साक्षी सहानुभूति (सिफारिश) सहायता साहित्य नहीं चाहता वह स्वयं अनन्त ब्रह्माण्ड तथा असंख्य प्रकार के जन्तुओं का निर्माता धारण पालन कर्त्ता प्रलय काल में लोकलोकान्तर को छिन्न भिन्न करता है।

परमेश्वर—अजन्मा अमृत्यु होने से निर्गुण और उत्पादक पालक, कर्मानुसार फल दायक होने से सगुण कहाता है।

„——ज्ञानचक्षु वा दिव्यदृष्टि से देखा वा पहिचाना जा सकता है भौतिक स्थूल नेत्रों से नहीं।

„——असंख्य जीवात्माओं का भी आत्मा होने से परमात्मा कहाता है ॥

„——और जीवमात्र तथा जीवों के कर्म और पृथिवी जल अग्नि वायु आकाश दिशा काल पांच तत्त्व का कारण (प्रकृति) नित्य हैं ॥

„——क्लेश कर्म तथा कर्मफल और संस्कार से असम्बद्ध, जीव से भिन्न है अर्थात् उस में अविद्या राग द्वेष अन्याय पक्षपात पापाचरण और वासना संस्कार का लेशमात्र नहीं है ॥

„——भूल चूक प्रमाद आलस्य से रहित है, जीवों के कर्मानुसार सुख दुःख नित्य दे रहा है ॥

„——सृष्टि का उपादान कारण (सामानरूप) नहीं है किन्तु निमित्त कारण अपनी शक्ति बुद्धि से जोड़ने तोड़ने वाला है ॥

„——धर्मात्मा महात्मा आर्य पुरुषों के समीप बाहर भीतर और दुरात्मा अनार्य लोगों से दूर है ॥

„——स्वयम्भू स्वयंसिद्ध स्वयम्प्रकाशमान है सूर्यादि ज्योतिष्मान् द्रव्य उस के दिये तेज से तेजस्वी हैं उसी के चलाने घुमाने पर चलते फिरते हैं ॥

„——मूर्त्तिपूजकों के लिये मूर्त्ति और भूत प्रेत पूजकों के लिये भूत प्रेत नहीं बन जाता वह सर्वदा एकरस व्यापक है ॥

„——का नियम (ला कानून) राजकीय व्यवस्था पुस्तक के समान नहीं है जो प्रतिवर्ष बदलता रहे ॥

„——का कोई मुख्य निवास स्थान वा घर नहीं है जहां पर जाने वा जिस मन्दिर मूर्त्ति की ओर शिर झुकाने तथा नितम्ब उठाने से वह मान लेवे वा वश में हो जावे ॥

„——को किसी वस्तु वा अधिकार प्राप्ति की इच्छा तृष्णा नहीं इस लिये वह निरीह बोला जाता है (नास्ति ईहा इच्छा यस्मिन् स निरीहः) इच्छा अप्राप्य वस्तु के लिये हुआ करती है

परमेश्वर—का प्रतिबिम्ब (फोटो) नहीं लिया जा सकता और न उस का चित्र खींचा जा सकता है।

,,——का लिङ्ग चिह्न रङ्ग ढङ्ग मूर्त्ति प्रतिमा लम्बाई चौड़ाई मुटाई का प्रमाण नहीं है।

,,——का मुख्य सर्वोपरि नाम ओङ्कार है इसी लिये प्रत्येक नाम के पहिले ओ३म् बोलने का नियम है। हरिः ओम् ऐसा उलटा पाठ करने वालों को भूल में पड़े जानो।

,,——बधिर नहीं है जो शंख बजाने घण्टा हिलाने बांग देने चिल्लाने जगाने से ही सुन सके॥

,,——रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श रहित है।

,,——महाधनी महादानी होने से भेंट चढ़ाना व्यर्थ है।

,,——नित्य निर्मल होने से स्नान कराना भूल है।

,,——निराकार होने से वस्त्राभूषण नहीं चाहता।

,,——नित्य तृप्त होने से नैवेद्य की इच्छा नहीं रखता।

,,——सर्व व्यापक होने से आवाहन विसर्जन के योग्य नहीं है।

,,——आकाशवत् जगत् से मिला हुआ और पृथक् भी है।

,,——का नामोच्चारण चाहें कोई करे ईश्वर अशुद्ध नहीं हो जाता।

,,——अपने गुण कर्म स्वभाव से ही जगद्विख्यात है।

,,——सेव्यमान है मनुष्यमात्र उस के सेवक वा दास हैं।

,,——अधर्मी कुकर्मियों की याचना प्रार्थना स्वीकार नहीं करता।

,,——किसी कार्य विशेष के लिये गर्भवास नहीं करता।

,,——गर्भवास से सुप्त लुप्त हो जाय तो सृष्टि प्रबन्ध कौन करे?।

,,——देह धारण करे तो मृत्यु भी उस के पीछे पड़ जाय।

,,——साकार हो जाय तो उस की सर्वव्यापकता में विघ्न आजाय।

,,——निर्दोष जीव जन्तुओं के मारने की आज्ञा देवे तो दयालु न कहावे।

,,——किसी मत (मज़हब) का पक्ष करे तो पक्षपाती अन्यायी हो जाय।

,,——के हाथ नहीं हैं परन्तु सब का बनाने थामने वाला है॥

,,——के पांव नहीं हैं सब ठौर पहुंचा हुआ है॥

,,——के कान नहीं हैं सब की प्रार्थना वार्त्ता सुनता है॥

,,——के आंख नहीं हैं सब के चरित्रों को देखता है॥

परमेश्वर—का हृदय नहीं सब के मनकी वार्ता निष्ठा जानता है ॥

„———के माता पिता नहीं वही सब का माता पिता है ॥

„———का कोई गुरु नहीं वही जगद्गुरु है ॥

„———के लोक लोकान्तर जड़ चेतन सब ही पुत्रवत् हैं ॥

„———को प्राप्त होने की सीढ़ी चारों वेद और सत्संग है ॥

„———की महिमा (कुदरत) शक्ति को वह आप ही जानता है ॥

„———के वेदोक्त नाम सब सार्थक हैं अनर्थक कोई भी नहीं है ॥

„———की उपासना सुमति सद्गति प्राप्ति का साधन है ॥

„———का बोध समाधि प्राणायाम द्वारा हो सकता है ॥

„———का उपदेश स्त्री जाति को भी वेद विद्यापढ़ाने का पाया जाता है ॥

„———अपनी प्रजा को परस्पर विरोधी आज्ञा नहीं देता ॥

„———का कोई कार्य निष्प्रयोजन निरर्थक नहीं है ॥

„———के भजन कीर्त्तन का अवसर अपराधी पाप रोगी असुर अनार्य लोगों को नहीं मिला करता ।

„———के बनाये सच्चे प्रत्यक्ष जगत् को मिथ्या बताने वाले गुप्त नास्तिक लोगों की बात मिथ्या ही जाननी चाहिये ॥

„———प्रजा के हितार्थ अपना नियम वेद (रूल वा रेग्यूलेशन दस्तूरूल अमल) ब्रह्मादि महर्षियों के द्वारा सृष्टि के आदि में ही प्रकाश करा दिया ।

„———का ज्ञान बहुत पढ़ने सुनने से वा न पढ़ने सुनने से भी नहीं होता पूर्वजन्म के संस्कार उदय होने पर किसी को थोड़ा पढ़ने सुनने तप करने से भी हो जाता है ॥

„———के होने की साक्षी प्रत्यक्ष सृष्टि दे रही है विना कर्त्ता के कोई साकार पदार्थ नहीं बन सकता ।

„———के वास्तविक भक्त दुग्धाहारी फलाहारी सर्वोपकारी नम्र शान्त निर्लोभ निष्कपट हुआ करते जिन के दर्शन दुर्लभ जिन का शाप आशीर्वाद व्यर्थ नहीं जाता है ।

„———प्रत्येक मनुष्य की कमाई मध्ये परजन्म के खाने पीने का सामान किसी प्रकार जमा भी करा दिया करता है ।

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ १ ॥

जब वेदाभ्यास सत्संग द्वारा हृदय की अविद्यारूपी गांठ खुल जाती, अन्तः-करण के सब सन्देहों की निवृत्ति हो जाती, कृच्छ्र चान्द्रायणादि जप तप संयम द्वारा संचित पापकर्म और उन के फल भस्म हो जाते हैं तब जिज्ञासु पुरुष बुद्धीन्द्रिय रूपी दृष्टि वा ज्ञानचक्षु से परमात्मा को जान वा देख सकता है। यह निम्नलिखित वाक्य श्री वेदव्यास जी का है जिन को उत्पन्न हुए ५००० वर्ष हुए परमेश्वर ने महर्षि प्रतिमहर्षिरूप दूतों के द्वारा हमारे पास भेजा है ।

स्वाध्यायाद्योगमासीत योगात् स्वाध्यायमामनेत् ।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते ॥ २ ॥

स्वाध्याय नाम चारों वेद और तदनुकूल मनुस्मृति उपनिषद् योग सांख्य वैशेषिक न्याय आदि ब्रह्मविद्या विषयक शास्त्रों के अर्थ सहित पढ़ने सुनने तदनुसार अनुष्ठान करने से चित्तवृत्ति योग की ओर झुकती है अष्टांगयोग साधन से स्वाध्याय दृढ़ होजाता है तथा स्वाध्याय और योग के परस्पर मेल से परमात्मा प्रकाशित निरूपित बोधित (साक्षात्) होजाता है । इस के सिवाय ब्रह्मज्ञान प्राप्ति की सीढ़ी और कोई नहीं है ॥

द्वितीयाध्याय जीवविषय ॥

जीवात्मा—नित्य निराकार चेतन अखण्डनीय अल्पज्ञ है ।

„——विना शरीर के कोई कर्म नहीं कर सकता और विना शरीर पाये सुख दुःख भी नहीं भोग सकता है ।

„——सामर्थ्यानुसार कर्म करते समय स्वाधीन, फल भोग के समय पराधीन होजाया करता है ।

„——कर्मानुसार उच्च नीच योनि (शरीर) पाता रहता है ।

„——सवार के तुल्य, शरीर को घोड़े के सदृश जानो ।

„——मरने के पीछे जन्म लेने तक घोर निद्रावश सोतासा रहता है ।

„——जिस २ के साथ जैसा २ वर्ताव करता है उस २ का बदला देने पाने के लिये बारम्बार जन्म पाता है ।

जीवात्मा—कृषाण वा दास के तुल्य कर्म करता फल भोगता जाता है ।

„———प्राक्तन कर्मों के अभ्यास से उत्तर कर्म की ओर स्वतः प्रवृत्त हो जाता है

„———न पुरुष है न स्त्री है न नपुंसक है न पशु है न पक्षी है न कृमि कीट है न वृक्षादि स्थावर रूप का है किन्तु निराकार चेतन है ।

„———जब २ जिस २ योनि को पाता है तब २ तैसा ही रूपवाला प्रतीत होता है।

„———शरीर के वृद्ध जीर्ण होने पर भी वृद्ध जीर्ण खण्डित नष्ट भ्रष्ट नहीं होता ॥

„———और परमात्मा का ऐसा ऐक्य संलग्न कदापि नहीं होता जैसा अ-द्वैतवादी प्रच्छन्न (गुप्त) नास्तिक मानते हैं ॥

„———शस्त्र से नहीं कट सकता आग से नहीं जलता जल में नहीं डूबता पवन से नहीं सूखता है ॥

„———देह छोड़े उपरान्त यमलोक वा वायु मण्डल में गाढ़निद्रा वश ईश्वर की सत्ता में रहता है ॥

„———जाग्रत् अवस्था में वा स्वप्नावस्था में मन द्वारा किसी न किसी काम में लगा ही रहता है ।।

„———का ज्ञान हुए विना परमात्मा का बोध किसी को नहीं हो सकता ।।

„———न किसी का माता पिता है न पुत्र कन्या है न भाई बहिन है पूर्व कर्मानुसार थोड़े काल के लिये सम्बन्धी हो जाता है ।।

„———नित्य एक ही दशा में रहना एकही भोजन करना एकही प्रकार के वस्त्र पहिनना नहीं चाहता ।।

„———तथा उस का कर्मफल भाग्य मन बुद्धि चित्त अहंकार विद्या ये गुप्त रहते गुण फल इन के प्रकट हो जाया करते हैं ।।

„———पिता के वीर्यद्वारा वा वीर्य से मिलकर माता के गर्भाशय स्थान में जाता, बनस्पतियों के पवन द्वारा पुष्प आदि में प्रवेश करता है ।।

„———के संगी साथी सतोगुण रजोगुण तमोगुण हैं जिस काल में इन तीनों में से एक प्रादुर्भूत प्रकाशित वा प्रबल होजाता है उस काल में दोनों तिरोभूत दबे हुए रहते हैं ।।

„———के कर्म सादि सान्त हुआ करते हैं इसी कारण फल भोग की भी अवधि हुआ करती है नित्य (हमेशा) के लिये सुख वा स्वर्गवास दुःख वा नरक वास मानने वालों को मूर्ख अविवेकी जानना चाहिये ।।

जीवात्मा—अकेला ही प्रकट होता वा उच्च नीच स्थावर जंगम योनि को धारण करता, अकेला ही संचित कर्मों का फल हर्ष शोक सुख दुःख पाता और अकेला ही गुप्त होता देह छोड़ता है ॥

,,———परमात्मा का उपकार वा अपकार नहीं कर सकता अर्थात् परमेश्वर को सुख दुःख नहीं दे सकता ॥

,,———जब प्राक्तन दुष्कर्मवशात् अत्यन्त रोग शोक से ग्रस्त परास्त होता है तब यह देह छूट जाय ऐसा चाहता और कहता भी है पर विना दुःख भोग की अवधि पूर्ण हुए पृथक् नहीं हो सकता ॥

,,———शरीर से भिन्न चेतन वस्तु है, शरीर जड़ पंचतत्त्व के योग से बनता है, जड़ पदार्थों से चेतन की उत्पत्ति नहीं हुआ करती ॥

,,———जब किसी प्रकार के देह को छोड़ता है तो त्यक्त देह का बीजरूप सार सूक्ष्म अदृश्य परमाणुवत् लिंग—शरीर चिह्नमात्र अपने संग ले जाता जो दूसरे गर्भाशय में रोपा जाने पर सामान पाके उठ खड़ा होता वा बढ़ने लगता है ॥

,,———जिस कलेवर में होगा वा है वह जरायुज अण्डज स्वेदज उद्भिज्ज किसी प्रकार का हो, इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख दुःख ज्ञान इन में से कोई सा गुण उस में अवश्य होगा यही जड़ चेतन की पहिचान है ।

,,———के निकलने पीछे भी कभी कभी ३७ घण्टे तक शरीर गर्म रहता है रुधिर भी पूर्ववत् गर्म शुद्ध निकलता है केवल उष्णता को ही जीव मानने वाले नास्तिकों की बात मिथ्या जानो ॥

,,———और परमात्मा को भयंकर मतावलम्बी अद्वैतवादी वेदान्त विरोधी लोग एक ही मानते और परमेश्वर का मायाग्रस्त हो कर जीव बन जाना कहते हैं इन के जाल में विश्वास न करना चाहिये ॥

,,———का निवासस्थान शरीर में मुख्य कर शिर है गर्भ में पहिले शिर ही बनता है बुद्धिस्थान भी शिर ही है ॥

तृतीयाध्याय मनुष्य विषय ॥

कोईमनुष्य—एक ही निमेष में चारों ओर नहीं देख सकता ।

,,———ईश्वरावतार नहीं हो सकता ।

,,———क्षण भर में सब बातें नहीं शोच सकता ।

कोईमनुष्य—पल भर में सर्वत्र नहीं पहुंच सकता ।

"——अजरामर नहीं हो सकता ।

"——सुख दुःख हर्ष शोक से रहित नहीं हो सकता ।

"——सर्वज्ञ सर्वव्यापक नहीं हो सकता ।

"——विना आखों के (आंखमीचकर) नहीं देख सकता ।

"——विना वेद पढ़े सुने ब्रह्मज्ञानी नहीं हो सकता ।

"——ईश्वरीय नियम को खण्डित नहीं कर सकता ।

"——नियम विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकता ।

"——किसी जड़ मूर्त्ति वा प्रेत को जीवदान नहीं दे सकता ।

"——किसी मृतक शरीर के गत जीव को लौटा बुला नहीं सकता ।

"——विना बीज खेती बाड़ी नहीं कर सकता ।

"——नया बीज, वृक्ष, कीट, पतंग, नहीं बना सकता ।

"——अपने कन्धे पर सवार हो नहीं दौड़ सकता ।

"——सब के सन्देहों की निवृत्ति नहीं कर सकता ।

"——परमेश्वर का दूत पूत (फरिस्ता) नहीं हो सकता ।।

"——सूर्य चन्द्रादि ग्रहों के टुकड़े नहीं कर सकता ।।

"——सूर्यादि के पास माल डांक नहीं ले जा सकता ।।

"——अपने आप मोक्ष नहीं पा सकता किन्तु ईश्वर की कृपा से ।

"——विना कर्म किये फलभोग नहीं कर सकता ।

"——सदेह संसार से पृथक् नहीं हो सकता ।

"——विना आधार अधर वा आकाश में नहीं ठहर सकता ।

"——विना स्त्री पुरुष के संयोग से उत्पन्न नहीं हो सकता ।

"——विना स्त्री के सन्तानोत्पत्ति नहीं कर सकता ।

"——विना ज्ञान और शुभ कर्मों के भुक्ति मुक्ति नहीं पा सकता ।

"——अपने तांई आप ही उत्पन्न नहीं कर सकता ।

"——अनन्त आकाश को समेट कर मुट्ठी में नहीं ले सकता ।

"——परमेश्वर को अपने आधीन नहीं कर सकता ।

"——परमेश्वर से जुदा नहीं हो सकता ।

"——स्वयम्भूः स्वयंसिद्ध अनुपम नहीं हो सकता ।

"——एक ही काल में घट बढ़ नहीं सकता ।

कोई मनुष्य—नीचे ऊपर चारों ओर नहीं जा सकता ।

„——परमेश्वर नहीं बन सकता सोऽहम् २ कहने बकने वालों को नास्तिक उन्मत्त जानो ।

„——जगत्भर के मनुष्यकृत पाप पुण्य का फल भागी भारवाही (कुली-मज़दूर) नहीं हो सकता ।

„——परमात्मा और जीवात्मा के बीच प्रतिभू प्रतिनिधि मध्यस्थ (जामिन) नहीं हो सकता ।

„——प्रस्तरादि किसी धातु की बनी जड़मूर्त्ति की पूजा करने से वा भूत प्रेत पूजने से ब्रह्मज्ञानी नहीं हो सकता ।

„——न्यूनान्न्यून १२ वर्ष वेद वेदांगों को पढ़े सुने विना विज्ञ सम्यक् सुशील धार्मिक नहीं हो सकता ॥

„——एक ही इन्द्रिय से सब इन्द्रियों का काम नहीं ले सकता ।

„——सुकर्मी हो वा कुकर्मी हो धनिक हो वा निर्धन हो पण्डित हो वा मूर्ख हो गुण कर्म वित्त प्रकट होई जाता है॥

„——अन्धा लूला लंगड़ा कोढ़ीहोना कारागार जाना नहीं चाहता पर उस को दुष्कृतवशात् दुःख भोगना ही पड़ता है ।

„——नहीं चाहता कि मैं परजन्म में किसी का दास टट्टू बैल आदि बनजाऊं पर धन मार लेने से बनना ही पड़ता है ।

„——नीच की सेवा करने से उच्च नहीं ठहर सकता जैसा घातक (बूचर कसाई) का नौकर दयावान् नहीं हो सकता ।

प्रत्येक मनुष्य—अपने प्राक्तन शुभ कर्मों का फल मुक्तिसुख अथवा स्वर्गसुख राज्याधिकार आप ही भोगता है ।

„——अपने प्राक्तन वा संचित पाप कर्मों का फल जन्म से वा पीछे अन्धा लूला लगंड़ा कुष्ठी कुरूप निर्बल हुए का दुःख शोक भी आप ही सहता है ।

„——जिस २ का उपकार अपकार करता है कालान्तर वा जन्मान्तर वा रूपान्तर में उस २ के द्वारा कार्य कारणवशात् परमेश्वर न्यायाधीश की प्रेरणा से सुख दुःख पाता है ।

प्रत्येक मनुष्य—अष्टांग योगसाधन से आवागमन जन्मान्तरीय अपने पराये का बोध प्राप्त कर सकता और पशु पक्षियों की बोली भी समझ सकता है ।

„——शुभ अशुभ कर्म (करनी) वशात् रंक से राजा और राजा से रंक (नंगा) हो सकता है महाभारतादि इतिहास सुनो आज कल के विषयी राजाओं की दशा देखलो ।

„——लक्ष चौरासी के फन्दे में नहीं पड़ सकते ।

„——जिज्ञासु, परमेश्वर के खोजी, जप तप साधक नहीं होते ।

„——मुमुक्षु मोक्षपद के इच्छुक ग्राहक नहीं होते और कोई ग्राहक होने पर भी कारणवशात् परिश्रम खोज नहीं करते ।

„——नैयायिक धार्मिक तत्त्वज्ञानी दूरदर्शी दृष्ट नहीं आते ।

„——योगी महापुरुष जगदुद्धारक साधु नहीं हुआ करते ।

„——पापी पाषण्डी स्वार्थी हिंसक निन्दक विवेकान्ध नहीं हैं ।

„——जन्म और कर्म से वा भाग्य और पुरुषार्थ से अथवा वर्ण और उद्योग के योग से प्रधान अप्रधान हुआ करते हैं ।

„——अपने २ प्राक्तन कर्मों का फल भोग किये जाते हैं, करेंगे ।

„——जन्म से मूर्ख हुआ करते हैं (जन्मना जायते शूद्रः)

„——संस्कार संगति और उपदेश से योग्यायोग्य हो जाया करते हैं ।

„——अपने २ धर्म कर्म समुदाय की उन्नति चाहते, करते हैं ।

„——अपनी वृद्धि के उद्योग में तत्पर रहा करते हैं ।

„——की जाति गुण कर्म देश विभाग के नाम से प्रसिद्ध हैं ।

„——सब के मित्र वा शत्रु नहीं हुआ करते ।

„——सब वस्तु के ग्राहक सम्पादक मर्मज्ञ गुणज्ञ नहीं होते ।

॥ चतुर्थ अध्याय आवागमन विषय ॥

१—आवागमन का शाब्दिक अर्थ आना जाना वा एक शरीर रूपी घर को छोड़ दूसरे में प्रवेश करना है जिस को हरिवर्षीय (यूरोपीय) भाषा में ट्रान्स-मिगरेशन वा ट्रान्सफर और यवनानी बोली में इन्तकाल तबदीली बदली बोलते हैं ।।

२–ईसामसीह ने भी कहा है कि दोष "मत लगाओ कि तुम पर भी दोष लगाया जाय जिस पैमाना से तुम मापते हो उसी से तुम्हारे लिये भी मापा जायगा,, इस वाक्य से हजरत का पुनर्जन्म मानना सिद्ध होता है कि जिस २ को तुम मारोगे उस २ के द्वारा जन्मान्तर में मारे जाओगे। और मैथ्यू आदि १२ शिष्यों को जो १० आज्ञा दी हैं उन में से छठी आज्ञा में स्पष्ट कहा है कि हत्या मत करियो ॥

३–प्राक्तन अर्थात् पूर्वजन्म के किये हुये कर्म फल का नाम प्रारब्ध, परालब्ध, भाग्य, भाग, दैव, लहना, बदाहुआ, होनहार है जिस को अंगरेजी में फौर्च्यून और लक, फारसी में मकसून मुकद्दर तकदीर किस्मत अमर शुदनी बोलते अर्थात् सत्य बात की साक्षी सब देश के विद्वान् समझदार मनुष्य देते आये हैं। जब जहां पर विधिपूर्वक उपाय करने पर मनोरथ सिद्ध नहीं होता वा नहीं बच सकता तब भाग्य का दोष सब ही स्वीकार करते हैं।

४–जब परमेश्वर न्यायाधीश सर्वान्तर्यामी है तो विना शुभ अशुभ कर्म वा पुण्य पाप किये किसी का उच्च कुल में अथवा राजा के घर में जन्म से ही सुख पाना और किसी को नीच दरिद्र घर में जन्म देना दुग्ध अन्न वस्त्रादि के विना वा न्यूनता के हेतु दुःख भोग कराना वा अन्धा लूला लंगड़ा खंजा अङ्गहीन बना देना ईश्वरीय न्याय में बट्टा लगाना है अर्थात् आवागमन को न मानने न जानने वाले अविवेकी अल्पज्ञ हैं।

५–जिस से इस जन्म की जान पहिचान प्रीति वैर भी नहीं उस के द्वारा अनायास लाभ हानि होना वा सुख दुःख मिलना पूर्व जन्म का ही लेन देन राग द्वेष समझा जाता है।

६–जैसा प्रत्येक मनुष्य बोदे पुराने खण्डित वस्त्रों को त्याग उद्यमानुसार नये २ धारण करता रहता है, तैसा ही जीवात्मा भी पुराने सड़े गले टूटे फटे देह को छोड़ कर्मानुसार नये २ शरीर पाता रहता है क्योंकि जीवात्मा नित्य और शरीर अनित्य है जैसा उत्पन्न हुए जीव मात्र का मरण निश्चय प्रत्यक्ष है तैसा ही मरे हुए का जन्म भी अवश्य है। मरना उत्पन्न होना तो मानो सोने जागने के समान प्राणीमात्र के पीछे लगा हुआ है।

७–लोक व्यवहार की सिद्धि के लिये तीन प्रकार के प्रमाण हुआ करते हैं, एक प्रत्यक्ष प्रमाण जो कार्य कारण इन्द्रियों के द्वारा विदित होवे। दूसरा शा-

स्त्रीय प्रमाण आप्तवाक्य वा सत्यवक्ता का वचन, तीसरा अनुमान जो सृष्टिक्रम नियम (सिलसिला) देख कर जाना माना जाय, आवागमन के होने में तीनों प्रमाण मिलते हैं केवल बोध विचार विवेक की आवश्यकता है ।

८—जिस २ के प्राक्तन कर्म कुछ २ मिलतेसे होते हैं उस २ की छवि प्यारी मनमोहनी मिलनसार भान होती और जिन २ के कर्मों में प्रकाशान्धकारवत् वैषम्य होता है उनकी प्रकृति प्रवृत्ति कान्ति बुरी लगती है पूर्व जन्म न होता तो राग द्वेष भी न होता ।

९—जिस ने जिस को जितना दिया हो उसी प्रमाण वा व्याज समेत उसी के द्वारा पाता है इसी को अन्न जल (आबदाना) भी कहते हैं जब प्राक्तन लेन देन पूरा होने को आता है तो अकस्मात् ऐसा कारण आके उपस्थित होता है कि जो तुर्त जुदाई करा देता है रोकने पर नहीं रुकता टालने पर भी नहीं टलता इसी को दैवगति वा हरइच्छा अंगरेजी में चान्स उर्दू में इत्तफाक वा भुदनी बोलते हैं अर्थात् संयोग वियोग जन्म मरण ईश्वर के न्याय से हुआ करता है ।

१०—एक ही प्रकार के सब कर्मचारी लोग एक से फल भागी नहीं होते मेरा काम बिगड़जाय उलटा फल मिले ऐसा कोई नहीं चाहता जैसा विधिपूर्वक गर्भाधान देना बुद्धि योग्यताधीन और बुद्धि, पूर्व संचित संस्काररूप प्रारब्ध कर्माधीन होती है इसी से सुलक्षण कुलक्षण पुत्र वा कन्या कानुत्पन्न होना भाग्याधीन है अर्थात् न्यायाधीश जगदीश उसी जीवात्मा को उस के यहां गर्भाशय में रोपता है जिस के साथ जिस का जितना जिस प्रकार लेन देन व्यवहार बर्त्ताव पूर्व किया हो उस के द्वारा अपने कर्मानुसार वह सुख दुःख हर्ष शोकमान अपमान काल विशेष के लिये पावे ॥

११—हाथी से लेकर पिस्सू तक प्रत्येक जन्तु मरने से डरता, बचने का उपाय यथाशक्ति करता भागता छिपता है । इस छोटे से प्रत्यक्ष प्रमाण से भी पूर्व जन्म सिद्ध होता है उसने असंख्य वार मरने का असह्य संकट सदा भोगा है । प्रत्येक जीव जन्तु जिस के गुण दोष को नहीं जानता उस से स्नेह और भय भी नहीं करता ॥

१२—कभी २ बालक, सर्प अग्नि थामने को जाता अभक्ष्य वस्तु खाने लगता इस का कारण प्रमाद है उस अवस्था में ७ धातुओं की कमी और मन की चं-

चलता के हेतु विवेक ज्ञान दबा रहता है जैसे किसी २ मूर्ख का चित्त, पितृधर्म छोड़ते नीच का मत, कर्म ग्रहण करते समय होता है ॥

१३—कोई बालक एक ही वार के सुनने से वाक्य कथा वार्ता के प्रयोजन को समझ लेता वा शिक्षा दीक्षा को ग्रहण करलेता, थोड़ी अवधि में विद्वान् गुणवान् होके उच्चपदाधिकार पालेता है और कोई बड़ा परिश्रम करने वा बहुत द्रव्य व्यय होने पर कई वर्ष में थोड़ा विद्योपार्जन कर सकता और किसी २ कुलक्षण को दीक्षा देना मानो ऊषरभूमि में बीज बोने के समान निष्फल होता है। ये सब अपने २ प्राक्तन कर्मों के ही फल हैं। अर्थात् जो जन पूर्वजन्म के विद्यावान् धार्मिक होते वे तो थोड़े ही संस्कार से सुशील सज्जन बन जाते जो पहिले जन्म के मूर्ख धूर्त होते वे विशेष उग्र उपाय से राह में आ सकते और जो दुर्जन शिष्ट पुरुषों की निन्दा पशु पक्षियों की हिंसा मांस भक्षण परद्रव्य हरण आदि पापाचरण हेतु पशु पक्षी कीट पतंग वृक्ष बल्ली की योनियों में होके आते हैं उन का चित्त विद्याभ्यास उत्तम कार्य में नहीं लगता।

१४—(व्यक्तिभेदः कर्मविशेषात्) किसी विवेकी दूरदर्शी का वाक्य है कि व्यक्तिभेद मतिभेद जातिभेद रूपभेद बलभेद अधिकारभेद के कारण कर्म ही हैं। एकान्त में बैठ एकाग्रचित्त से निष्पक्ष हो कर शोचने विचारने से जन्मान्तरीय कर्म दर्पण में रूप के समान दृष्ट आ सकते हैं।

१५—किसी कर्मवशात् कुलवान्, धनवान् विद्यावान्, के घर में जन्म मिलजाने पर भी कोई २ मन्दभागी मन्दबुद्धि विद्याभ्यास में तन मन नहीं लगाते शिक्षा देने पर क्रोधवश हो घर से निकल भीख मांगते अथवा किसी कुपथ्य हेतु रोगग्रस्त हो जाते वा विष खाकर मर जाते वा अन्य प्रकार से आत्मघात कर बैठते वा अनाचार द्वारा जाति पतित म्लेच्छ उन्मत्त बन जाते हैं। और कोई किसी खोटे कर्म दोष से नीच दरिद्र घर में जन्म पाने पर शोचते चाहते हैं कि हम को सामान गुरु अवसर मिले तो विद्या पढ़ें उत्तमोत्तम कार्य सम्पादन करें उन्हें दौर्भाग्यवशात् प्राप्त ही नहीं होते और कोई ग्रामीण अनभ्यस्त घर में जन्म पाने पर भी प्राक्तन शुभ कर्म फलोदय होने पर बड़े २ पदाधिकार पा लेते वा महात्मा बन जाते हैं।

१६—(कारणाभावात् कार्याभावः) प्रत्येक कार्य के सुधरने बिगड़ने में कारण

अवश्य होता है मनुष्यों की सुदशा दुर्दशा उच्च नीच जाति में जन्म पाने वाले सुख दुःख भोग के कारण प्राक्तन कर्म ही हैं किसी कवि ने कहा भी है ।

दोहा ॥

को सुख को दुःख देत है, देत कर्म झकझोर ।
उरझै सुरझै आपही, ध्वजा पवन के ज़ोर ॥

१७—जैसे निर्मल निराकार आकाश में पवन के आश्रय अग्नि जल तथा किसी प्रकार की धूल मट्टी के परमाणु मिल जाने से आकाश का रङ्ग बदलसा जाता कालान्तर में शुद्ध भी होजाता है और निर्मल जल में कज्जल हिरंजी खड़िया मट्टी आदि किसी प्रकार की वस्तु मिल जाने से जल का रंग भी तद्वत् सा भान होता है वास्तव में आकाश और जल का कोई रंग नहीं है तैसे ही जीवात्मा भी कर्मफल वा देह आहार संगति के वश थोड़े काल के लिये शुद्ध अशुद्ध ऊंच नीच सुखी दुःखी हो जाया करता है ।

१८—जैसे २ वृक्षों की जड़ में खाद जल दिया जाता है काम बन्द हो जाने पर भी समयान्तर में उन २ का फल मिलता ही है (विघ्न उपस्थित होना किसी अन्य दुष्कर्म का फल है) मरणकाल में संचित पाप पुण्य कर्म फल समूह वासनारूप से आत्मा के सङ्ग जाता है उसी के अनुसार उत्तम मध्यम अधम समुदाय में जन्म होकर कर्मानुकूल ही सुख दुःख के समान भोगने को मिल जाया करते हैं । वशिष्ठ जी भी साक्षी देते हैं कि—

(सहायास्तादृशाएव यादृशी भवितव्यता)

बुद्धि भी उधर ही को झुक जाती है व्यवसाय भी वैसा ही करता है सहायक भी वैसे ही मिल जाया करते हैं जैसी होनहार होती है ।

१९—संसार में कोई विद्यापात्र कोई धनपात्र कोई दोनों सहित कोई दोनों रहित कोई मध्यवर्त्ती देखने सुनने में आते हैं । इस का कारण शतैषा (जो १०० ओषधियों के योग से क्वाथ बनता है) ओषधि के समान है उस में कोई द्रव्यभाग का न्यूनाधिक्य हो जाने से औषध के गुण में भेद हो जाता है इसी लिये किसी आनुभविक (तजर्बेकार) पुरुष का वाक्य है कि (कर्मवैचित्र्यात् सृष्टिवैचित्र्यम्) अनादिकाल से जीवों के कर्मों की विचित्रता से सृष्टि नानारूपवती हो रही है । और आगे को भी अनन्तकाल तक होती जायगी ।

(न दुर्ज्जनः साधुदशामुपैति बहुप्रकारैरपि शिक्षमाणः)

२० स्वर्गवासी विद्यानिधि जी का वाक्य है कि बहुत प्रकार की शिक्षा दीक्षा देने भर्त्सना ताड़ना करने पर भी दुर्जन सज्जनों के आचरण को ग्रहण धारण नहीं करता उपाध्याय जी का कहना सत्य है। जब परद्रव्यहरण परमांसभक्षण से जिस का विवेक नष्ट भ्रष्ट हो जाता तब संचित पाप कर्म समुदाय असाध्य रोग के समान दबा लेता है अर्थात् वासना कामना मृगतृष्णा द्वारा डिगाता गिराता दुःखरूप फल देता है। ऐसे ही अवसर पर कहा जाता है कि—

"विनाशकाले विपरीतबुद्धिः"

२१—जैसे कोई समझदार मनुष्य छोटे बालकों के हाथ में तेज छुरी आदि अस्त्र शस्त्र बहुमूल्य द्रव्य नहीं देता तैसे ही त्रिकालज्ञ परमात्मा ने भी मूर्ख म्लेच्छ दुर्जनों के लिये आवागमन सूक्ष्मविषय को गुप्त रक्खा है कि उन लोगों को हमारे मृतक पितर मित्र बान्धव उस २ योनि में कष्ट भोग करे जाते हैं ऐसा भान (मालूम) होने पर शोकसागर में डूब जावेंगे वा कर्म फल भोग न होने देवेंगे लोकमर्य्यादा में विघ्न डालेंगे जब शनैः २ वैदिकी विद्या द्वारा तत्वज्ञान प्राप्त कर लेवेंगे तो उन के चित्त में शान्ति आजाने पर सम्पूर्ण जगत्भर के स्थावर जंगम जीव जन्तुओं को असंख्य जन्म जन्मान्तरीय माता पिता मित्र पुत्र बान्धव देखने शोचने लगेंगे तब विधिपूर्वक सब का उद्धार उपकार में ही प्रवृत्त हो राग द्वेष से निवृत्त हो जावेंगे।

२२—जहां कहीं जब कभी जो कोई तुम्हारे धन द्रव्य को मार लेवे जिसको तुम अपना अंश समझे हुए हो निश्चय जानो कि उस में दो बातों में से एक अवश्य है के तो उसने अपना प्राप्त (वसूल) किया है और के पर जन्म में व्याज समेत भरेगा जितना बोया जाता है उतना ही फले तो कोई खेती व्योपार न करे।

२३—ऊपर २ को देखो कैसे २ विद्यावान् आचारवान् श्रद्धावान् भाग्यवान् प्रतापवान्, धनवान्, रूपवान्, उत्साहवान्, बलवान्, तेजवान्, पुरुष हैं और नीचे को दृष्टि दो तो कैसे २ विद्याहीन बुद्धिहीन विवेकहीन भाग्यहीन धर्महीन कर्महीन बलहीन अंगहीन आदि संसार में पड़े खड़े हैं ये सब अपनी २ करनी के फल पा खा रहे हैं कहावत प्रसिद्ध है कि "यथाकर्म तथाफलम्—जैसी करनी तैसी भरनी"। परमेश्वर अन्यायी उन्मत्त नहीं है जो किसी को विना पुण्य कर्म किये

स्वर्ग वास सुखधाम सुख साधन दे देवे वा विना पाप कर्म किये नरक वास दुःखभोग करावे।

२४—प्राणीमात्र सुख की कामना याचना करते हैं दुःख की इच्छा कोई भी नहीं करता परन्तु दुःख विना बुलाये ही उपस्थित हो जाते हैं तैसे ही सुख भी अकस्मात् प्राप्त होते ही हैं। अर्थात् संचित कर्मानुसार सुख और दुःख का प्रेरक सर्वान्तर्यामी न्यायाधीश जगदीश्वर ही है।

दोहा—ईश सर्वगत होय के। सब जन की सुध लेत।
जाकी जैसी चाकरी। ताको तैसा देत॥

२५—यद्यपि कोई २ पशु पक्षी जलचर मनुष्यों की अपेक्षा बलिष्ठ भी होते कष्ट से बचने का उपाय भागना आदि कर सकते हैं तथापि मनुष्य की अपेक्षा निर्बल निर्बुद्धि ही माने जाते हैं क्योंकि कोई गाड़ीवान् भैंसा बैल होना नहीं चाहता कोई सवार घोड़ा वा साईस बन जाने की इच्छा नहीं करता कोई स्वाधीन राजा पराधीन (बंधुवा कैदी) होने की कामना नहीं करता कोई मनुष्य अन्धा लूला लंगड़ा गूंगा हो जाना नहीं चाहता इसी अनुमान से मनुष्यों के जीवात्मा का परमात्मा की प्रेरणा से पाप कर्मों के फल भोग निमित्त पशु पक्षी वृक्ष कीट पतंग आदि नीच योनि में जाना सम्भव है॥

२६—जैसे कोई सम्पत्तिमान् अधिकारी मनुष्य किसी दुराचार व्यभिचार के कारण राजा की प्रेरणा से बन्दीगृह में भेजा जाता है वहां जाके उस का आहार पहिरावा काम बदल जाता अथवा रूखा सूखा घटका मिलता है तैसा ही मनुष्य का भी खोटे कर्म जीवहिंसा निन्दा (गुणेषु दोषारोपणं) निन्दा के हेतु पशु पक्षी कृमि कीट वृक्षादि योनि में जाना वा पाना मानना चाहिये इसी का नाम दशान्तर रूपान्तर है॥

२७—पूर्वजन्मों के समाचारों का स्मरण न रहने के हेतु कालान्तर देहान्तर अवस्थान्तर दशान्तर कर्मान्तर और आहार व्यवहार भी हैं किसी वृद्ध मनुष्य से पूछिये ३ वर्ष १० मास २७ दिन की अवस्था में चतुर्थ प्रहर के मध्य में आप कहां बैठे थे क्या शोचते करते थे मुख किस दिशा को था उस दिन क्या खाया था? कदापि नहीं बता सकेगा जब इसी काया की बातों का स्मरण नहीं रहता तो पूर्वजन्मों का क्योंकर रह सकता है जिस में देहान्तर स्थानान्तर आदि कई अन्तर बीच में पड़गये हैं॥

२८—वैद्यक शास्त्र के देखने से ज्ञात हुआ कि प्रतिदिन प्रस्वेद मल मूत्र द्वारा देह से पुराने परमाणु निकलते आहार द्वारा नित्य नवीन आते बदलते रहते हैं यहां तक कि ७ वर्ष में बड़ा अन्तर हो जाता है यही स्मरण न रहने भूलने का हेतु है और यही सहोदर बेटे वा भाइयों में रूप भेद का कारण है ॥

२९—धूर्त मूर्ख उन्मत्त हत्याकारी मांसाहारी पक्षपाती धर्मघाती मतवादी वेदविरोधी नीच म्लेच्छ हठी (मज़हवी खुदगर्ज़ बेरहम बेईमान बदकार मक्कार स्वार्थी) इस आवागमन सूक्ष्म विषय को नहीं समझ सकते इन का बुद्धि विवेकस्थान ब्रह्माण्ड कट्टर होता है ॥

३० -वेदाभ्यासेन सततं शौचेन तपसैव च ।
अद्रोहेण च भूतानां जातिं स्मरति पौर्विकीम् ॥

नित्य अर्थ सहित वेद पाठ करने सुनने से, शरीर मन वाणी द्वारा शुद्ध निष्कपट व्यवहार वर्ताव करने से, तपोनुष्ठान वा सहनशील होने से, प्राणीमात्र पर द्रोहभाव छोड़ देने से पूर्वजन्म की जाति का बोध होजाता है यह भगवान् मनुजी का वाक्य है ॥

३१ -संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम्

संस्कारों के प्रत्यक्ष करने से पूर्वजन्म की जाति का ज्ञान हो जाता है, वे संस्कार दो प्रकार के होते हैं एक वासनारूप जो स्मृतिपूर्वक क्लेशों से उत्पन्न होते हैं, दूसरे विपाकरूप जो पूर्व कर्मों के फल (धर्म वा अधर्म) हैं इन दोनों के तत्त्व को समाधि द्वारा योगी पुरुष पासकता है ॥

३२—अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः

निरभिमान निष्पक्ष होकर एकान्त में एकाग्रचित्त से शोचने विचारने से भी इस घर में जन्म ऐसा रूप क्योंकर हुआ कारण विदित हो जाता है ॥

३३—किसी कार्य विशेष का फल तत्काल किसी का दिनान्तर मासान्तर वर्षान्तर में मिलता है एवम् कोई कर्म इसी जन्म में कोई पर जन्म में कोई १००० जन्म में जा के भी अवसर पाकर फलता है निश्चय जानो किया हुआ कर्म निष्फल नहीं जाता ।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।
नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ॥

तत्वज्ञ दूरदर्शी योगीश्वर जी का वाक्य है कि किये हुए भले बुरे कर्म का फल सुख दुःख समयान्तर में अवश्य मिलता है करोड़ों कल्प क्यों न बीत जांय विना भोगे कर्म फल क्षय नहीं होता।

३४—पाप रोगी ताप भोगी लोग कहा करते हैं कि इस राज्य में वा इस कलिकाल में बड़ा अन्धेर है दुर्बल की सुनाई नहीं होती (जिस की लाठी उस की भैंस) इत्यादि यह नहीं जानते कि अंधेरा उजाला अपने २ भाग्य (कर्मफल) पर निर्भर है। इस लिये हम कहते हैं कि अपनी शक्ति बुद्धि अनुसार धैर्य के साथ उद्यम करते रहो ऋण की जड़ काटते रहो गोजाति की टहल में तत्पर रहो इस पुस्तक को नित्य पढ़ते सुनते रहो तो कालान्तर जन्मान्तर देहान्तर में तुम्हारा भी भाग्योदय अवश्य हो जायगा।

३५-शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम्॥

हत्यारे व्याधा बधिक असुर राक्षस निर्दय दुर्जन, वृक्ष बल्ली घास स्थावर योनि पाते हैं गप्पी दम्भी झूठे निन्दक बंचक लोग गूंगे तोतले हकले पशु पक्षी की योनि पाया करते, मन से किसी का बुरा चाहने वाले कपटी नीच भंगी चाण्डाल का मलिन देह पाते आये, आगे को भी पावेंगे जो जिस इन्द्रिय द्वारा उपकार अपकार करता है उसी के द्वारा सुख दुःख भोग करता है। इसी की पुष्टि में अगला श्लोक है—

३६—स्थावराः कृमिकीटाश्च मत्स्याः सर्पाश्च कच्छपाः।
पशवश्च मृगाश्चैव जघन्या तामसी गतिः॥

जिन के स्वभाव में अत्यन्त तमोगुण क्रोध लोभ मोह है वे दुर्जन स्थावर योनिरूप कारागार में तथा कृमि कीट छोटे बड़े मल मूत्र मक्खी कीड़े मकोड़े मछली मेंढक सर्प कछुवा आदि जल जन्तु शूकर आदि पशु साही स्यार आदि मृग के जन्म को पाते हैं इन से ऊपर २ के प्रत्येक जीव जन्तुओं का सविस्तार समाचार श्रीस्वामी दयानन्दसरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश द्वारा जता दिया है देख लो।

३७—अब कभी जहां कहीं किसी चक्रवर्ती सम्राट् के गोत्र में से घटते २ कोई (कुली) भारवाही हो जाय वह कहे कि हमारे पुरुषा ऐसे २ पराक्रमी हुए तो कौन प्रतीति माने तथा वेदपारंगत चतुर्वेदीय के वंश में प्रमादालस्य हेतु वि-

द्याभ्यास छूटते २ भिक्षा मांगने लगे तो वह अपने पूर्वजों कैसे पराक्रम नहीं कर सकता और न वह पदाधिकार पा सकता है यही दशा इदानीम् भारतवासी द्विजाति की होगई जिन के पितृयों ने विधि पूर्वक चारों आश्रमों के सेवन से आवागमन के भेद को पाया पाने का मार्ग (ग्रन्थों के द्वारा) बताया वे भी पुनर्जन्म विषय में सन्देह करने लगे । तो भी निर्मूल निर्वीर्य किसी वस्तु का कदापि नहीं होता इस अध्यात्मविद्या (आवागमन) के जानने वाले योगीश्वर आज दिन बहुत थोड़े हैं जिन के दर्शन सर्वसाधारण लोगों को दुर्लभ हैं कभी२ कहीं २ किसी को दैवात् मिलजाया करते हैं । उत्तराखण्डखण्डान्तर्गत गढ़वाल देश के भीतर कर्ण प्रयाग के उत्तर अलखनन्दानदी किनारे एक गुहा के पास सम्वत् १९३२ माघ मास में हम ने अपनी आंखों से देखा है सिद्ध जी का निर्मल देह उज्वलकान्ति मधुरवाणी अवस्था मेरे विचार में अनुमान ९० वर्ष की होगी त्रिकालदर्शी थे ।

दोहा—विरले नर योगी यती, विरले पावन हार ।
दुःख खण्डन विरले पुरुष, ते उत्तम संसार ॥

३८—पूर्वजन्म के साझा व्यवहार के हेतु ४ । ५ । ६ जन्तु एक ही उदर में जन्म पा लेते हैं जब तक उन का संचित लेन देन बना रहता है तब तक उन में परस्पर मेल भी रहता है ज्यों २ पूरा होने को आता है चित्त में वैपम्य भी उत्पन्न होता जाता है यहां तक कि एक दिन पृथक् २ हो जाते हैं फिर किसी का किसी पर मोह स्नेह भी नहीं रहता न्यायशास्त्र के कर्त्ता महर्षि वात्स्यायन जी भी साक्षी देते हैं कि (संयोगो वियोगान्तः) जिस का धन द्रव्य तथा जन्तु से संयोग हुआ हो उस के संग वियोग भी अवश्य हुआ और होगा इसी का नाम आवागमन है ॥

३९—जुदाई के समय पिता अपने ४ । ५ पुत्रों के समान धन द्रव्य बांट देता है भाई अपने भाग्यानुसार बुद्धि अनुसार कालान्तर में न्यूनाधिक हो जाते हैं उन में से कोई जुआ में कोई व्यभिचार आदि दुष्कर्मों में उड़ा देता कोई आलस्य हेतु पितृ प्रसाद में से थोड़ा २ खा जाता है तो कई दिन में रीता हो जाता और कोई भाग्यवान् बुद्धिमान् वणिज व्योपार आदि उद्यम के हेतु बढ़ा लेता है सत्य है "बुद्धिः कर्मानुसारिणी" जिन लोगों ने पूर्वजन्म में दान धर्मादि

शुभ कर्म किये वे इस जन्म में थोड़ा परिश्रम थोड़ी पूंजी से भी धन द्रव्य बढ़ा सकते हैं। जो वर्त्तमान में बोते हैं वे आगे अगले जन्म में लेवेंगे।

४०—जितना बड़ा काम हो उस के लिये उतना ही सामान प्रयत्न भी चाहिये जितना दुःसाध्य रोग वा कष्ट हो उस के निवारणार्थ उसी प्रमाण औषध उपाय करना पड़ता है मन भर जिन्स सेर भर के बाट से एक ही बार नहीं उठाई जासकती जिस के तुम १००) के ऋणी हो १) देकर शेष के लिये हाथ जोड़ने से नहीं मानेगा वर्त्तमानीय लोग कोई तो एक लोटा जल को शिर में छोड़ते हुए " कायिकवाचिकमानसिकजन्मजन्मान्तरीयज्ञाताज्ञातसकलपाप क्षयार्थं स्नानं करिष्ये " पढ़ते और कोई एकादशी के नाम अन्नलंघन से ही पाप मोचन मानते और कोई अविवेकी "अये ! हमारे बाप जो आसमान पर है (क्या-संसार में नहीं है ?) तेरा राज्य आवे हमें रोटी दे हमारी परीक्षा न कर (परीक्षक अन्तर्यामी नहीं होता) हमारे सब पापों को क्षमाकर अमुक (मृतक) के वसीले से" इस प्रकार की दुआ मांगने से ही भुक्ति मुक्ति मिल जाने की भ्रान्ति में पड़े हैं और कोई किसी हुडंगर पैगम्बर के कल्पित अनाप सनाप वाक्यों के भरोसे नित्य जीवहिंसा मांसभक्षणादि महापाप करे जाते तिस पर भी बैकुण्ठ (जिन्नत) मिल जाने का विश्वास किये हुए बैटे हैं॥

दोहा—चोरी करैं निहान की। करैं सूद को दान।
ऊंचे चढ़ के देखिये। केतिक दूर विमान॥

४१-जब कोई बलवान् अन्यायी किसी दीन दुर्बल के धन द्रव्य को हर लेता है तो निर्बल मनुष्य यही कह कर वा समझ कर धैर्य्य कर लेता है कि परलोक में देगा परलोक इस योग रूढ़ी शब्द के अर्थ पर ध्यान दीजिये पर नाम दूसरा लोक नाम संसार जनसमुदाय का है अर्थात् जन्मान्तर कालान्तर देहान्तर में ईश्वर की प्रेरणा से अवश्य देगा क्योंकि (जीवो नित्यो हेतुरस्यत्वनित्यः) जीवात्मा नित्य उस के सहायक शरीर के अवयव ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रिय तथा धन अधिकार अनित्य हैं॥

४२—महात्मा पुरुषों का जीव ब्रह्माण्ड के सूक्ष्म छिद्र द्वारा निकलता साधारण मनुष्यों का मुख नासिका कर्ण चक्षु ७ द्वार में से किसी से और पापियों का पायूपस्थ (अधोमुख) द्वार से निकल देह छोड़ा करता है इसी प्रकार धर्मिष्ठ मनुष्यों के देह की नरमेध द्वारा भस्मगति हुआ करती है म्लेच्छ पापिष्ठ

दुर्जनों की लोथ सड़कर कीड़े पड़ते दुर्गन्ध फैलती रोगोत्पत्ति कराती अथवा गिद्ध कव्वे गीदड़ कुत्तों ने नोच खाये तो विष्ठागति हुई, फलतः दुरात्मा लोग जीतेजी मनसा वाचा कर्मणा और मरे पर भी देह द्वारा संसार का अपकार ही करते पुनरपि खटमल पिस्सू बिच्छू आदि योनि पाने पर दुःख ही देते हैं ॥

४३—पूर्वजन्म की बातें जिस को स्मरण होवें हमने ऐसा मनुष्य नहीं देखा इतना कहने से ही आवागमन झूठ नहीं हो सकता क्या किसी मूसाई ईसाई ने नूह और हजरत मूसा ईसा को देखा है ? अपने २ बड़े बूढ़ों की बड़ाई तो सभी करते हैं । क्या आज कल के किसी मुसलमान ने मुहम्मद साहब को और नबी वली औलिया को देखा है जिन के नाम का मुहर्रम में ताजिया तमाशा करते हैं ? क्या किसी ने सुलेमान बादशाह हातम और लुकमान हकीम को देखा है ? यदि कहो कि तवारीख से साबित है तो हमारे पास भी ऐतिहासिक लेख है जैसे पातञ्जल योगशास्त्र के तृतीयपाद में दृष्टान्त की भांति एक कथा लिखी है कि "आवट्य ऋषि ने जैगीषव्य से पूछा कि आप को तपोबल से १० महाकल्पों के सब जन्मों का स्मरण है कहिये किस योनि में आप ने अधिक सुख पाया ? महात्मा जैगीषव्य ऋषिने उत्तर दिया कि केवल निर्बीज समाधिकाल में जो सुख पाया सो न तो राज्याधिकार में और न अन्यान्य किसी योनि में प्राप्त हुआ" । स्वामी शंकराचार्य जी लिखते हैं कि दशम मास में बाहर आने से पहिले गर्भ में जीवात्मा अपने तईं कीचड़ में सना कोठरी में बन्ध देख शोचता है कि अब की बार तो मुक्ति का साधन उग्र तप अवश्य करूंगा बाहर आके यहां २ कहने लगा वहां की सुध भूल गया ॥

४४—और पाठक वा श्रोता सज्जनों को यह भी ज्ञात होकि मनुष्य जन्म के मुख्य ४ भेद हैं प्रथम उत्तम जन्म देवता लोगों का (दिव्यगुणवत्यो देवताः) पूर्वजन्म के अभ्यास से बालकपन से ही किसी कारण चित्त में वैराग्य उत्पन्न हो जाने से विद्याभ्यास में तत्पर हो जाते हैं । द्वितीय राजा रईस सेठ साहूकारों का पूर्वजन्म के दान धर्मादि शुभ कर्मों का फल काल विशेष के लिये सुख भोग निमित्त, तृतीय प्रकार के जिस ने पहिले जन्म में परद्रव्यहरण परस्त्रीगमनादि पापाचरण किये हों उन के फल भोग निमित्त अन्धा लूला लंगड़ा खंजा बौना नपुंसक दरिद्र कुष्ठ रोगी श्वानवृत्ति काकवृत्ति भिक्षावृत्ति दासवृत्ति

से निर्वाह करते महाकष्ट लज्जा अपयश सहते हैं। चतुर्थ प्रकार के राक्षस निशाचर निर्दय नीच म्लेच्छ चाण्डाल हिंसक निन्दक वंचक लम्पट दुर्जन प्राक्तन अति निकृष्ट कर्मों के अभ्यास से नित्य दुराचार में ही सन्नद्ध रहते वैदिकी शिक्षा दीक्षा कदापि ग्रहण नहीं करते, करें क्यों ? उन को तो कुम्भीपाक महारौरव अन्धतामिस्र नाम नरक की यातना भोगनी है शास्त्र किसी उपद्रवी के हाथ पांव मुख को थाम नहीं सकता।

दोहा—तुलसी पिछले पापते, हरि चर्चा न सुहाय।
जैसे ज्वर के वेगते, भोजन की रुचि जाय॥

४५—हमने एक सत्यवादी वृद्ध साधू जी के मुख से सुना है कि जब भारत के पश्चिमी प्रान्त की प्रजा असुरों के अन्याय से त्राहि २ करती थी तब योगिराज हरिदास जीने जो हेमकूट पर्वत की गुहा में तपस्या करते थे पंजर छोड़ महात्मा महासिंह के घर जन्म लेके रणजीतसिंह नाम धारण किया पूर्व में यमुना से लेकर सारा पांचाल देश काश्मीर सिन्धुपार गन्धार देश अपने अधिकार में लिया राक्षसों को परास्त करके धर्म का जीर्णोद्धार किया ५८ वर्ष की अवस्था में सुखमृत्यु से परमधाम को प्रस्थान किया जो ज्योति जिस के संग उदय हुई थी उसी के साथ अस्त भी हो गई !!! ॥

४६—(अग्निस्तस्य जलायते) श्रीमहाराज विक्रमादित्य के कनिष्ठ भ्राता भर्तृहरि जी कहते हैं कि अग्नि उस के लिये जल का सा गुण देती है, समुद्र उस के लिये कुल्या है, सुमेरुकाचल छोटासा पत्थर, सिंह हरिण के तुल्य, सर्प्प माला का गुण देता और विषरस अमृत वर्षाता है कि जिस का चित्त यमनियमादि अष्टांग योग तप द्वारा शुद्ध हो गया जिस के जन्मान्तरीय पाप कर्म फल भस्म हो गये हों (नास्ति योगसमं बलम्) योग के समान बल नहीं है (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः) चित्त की तरङ्गों को सब ओर से रोक कर इष्ट की ओर लगाने को ही योग कहते हैं॥

४७—(जन्मौषधिमन्त्रतपःसमाधिजाः सिद्धयः)

संसार में अधिकांश मनुष्यों की तृष्णा लौकिक ऋद्धि सिद्धि की ओर झुकी देख उन के हितार्थ योगीश्वर पतञ्जलि जी लिखते हैं कि जन्म से औषधि से मन्त्र से तप से समाधि से सिद्धि प्राप्त होती है। पूर्वजन्म के उत्तमोत्तम

संचित पुण्य कर्म द्वारा किसी महानुभाव महात्मा कुलीन पुरुष के घर में उत्पन्न होता अथवा राजा धनाढ्य के घर में जन्म होकर सुख भोग करना जन्मसिद्धि कहाती है शेष औषधिसिद्धि मन्त्रसिद्धि तपःसिद्धि समाधिसिद्धि प्राप्ति के उपाय पातञ्जलयोग शास्त्र में विस्तारपूर्वक लिखे हैं। और यह भी विदित होकि ऋद्धि सिद्धि अधर्माचरण से भी प्राप्त होसकती है। उस से परिणाम भला नहीं होता।

४८—अनुमान तोला भर नित्य के प्रमाण से वर्षान्तर्गत एक मनुष्य ५५ लवण खालेता यदि एक ही वार खावे तो मर जाय, २॥ कोश के लगभग नित्य चलने से एक वर्ष में १००० कोश की यात्रा कर सकता है पर एक ही दिन में जाना दुर्घट है। मृत्यु में जो महाकष्ट होता है उस को प्राणायामादि अष्टांग योग द्वारा थोड़ा २ नित्य सहने से अनेक प्रकार की हत्या से बच सकता सहनशील को देह छोड़ते समय कष्ट नहीं होता। धनी को शनैः २ थोड़ा २ देते रहने से दिवाला नहीं होने पाता। नित्यप्रति अग्निहोत्र द्वारा प्राणी मात्र का उपकार करने से सब के ऋण से मुक्त और धर्मसंग्रह हो जाता है॥

४९—यदि कोई वेश्यापुत्र जारपुत्र कहे कि संसार में अपने बाप का बेटा कौन है? व्यभिचारी दुराचारी अनाचारी कहे कि जितेन्द्रिय वालयती सदाचारी कौन है? नीच म्लेच्छ मांसाहारी कहे कि (सब मनुष्य पापी हैं) हत्या निन्दा से कौन बच सकता है फलाहारी कौन है? मूर्ख धूर्त्त कहे कि सत्यवादी ब्रह्मज्ञानी कौन है? उस का कहना सत्य नहीं हो सकता इसी प्रकार पूर्वजन्म की सुधि बुध (खबर) किस को है? कहने बकने वाले का वाक्य भी प्रामाणिक नहीं हो सकता। बस एक प्रत्यक्ष प्रमाण और देकर इस विषय को पूर्ण करते हैं॥

(साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने)

वास्तविक साधू महात्मा सब ठौर नहीं पाये जाते, जोगी भोगी वेषधारी पाषण्डी मंगते जहां कहो तहां मिल जाया करते, चन्दन के वृक्ष सर्वत्र नहीं उगते विषैले कटीले निष्फल कहां न मिलेंगे? प्रत्यक्ष देख लो कृमि कीट संसार में असंख्य हैं उन से बड़े कम हाथी गैंडा आदि बहुत थोड़े स्वार्थीजन बहुत परमार्थी कम साधारण मनुष्य अधिकांश राजा महाराजा कम उन में भी पुत्रवत् प्रजापालक तो सर्वत्र सदा न्यून ही होते हैं। एवम् सर्वोपकारी तत्वज्ञानी दूरदर्शी विवेकी परमहंस परिव्राजक आदि सन्तों के तो दर्शन दुर्लभ हुआ ही करते हैं॥

पञ्चमाध्याय उपदेश विषय।

(पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशंकालोदिगात्मामनइतिद्रव्याणि)

पृथिवी जल तेज वायु आकाश काल दिशा आत्मा और मन ये ९ द्रव्य कहाते हैं इन्हीं में से दो के आघात से शब्द उत्पन्न होता है अन्यत्र भी कहा है (आप्तोपदेशः शब्दः) आप्त नाम तत्त्वज्ञानी महापुरुष के वाक्य को शब्द कहते हैं।

२—शून्य (खाली) आकाश से स्वतः सार्थक शब्द पद वचन वाक्य प्रकट नहीं हो सकता और न अन्तरिक्ष से ग्रन्थ बद्ध हो कर कोई पुस्तक देशभाषा में कभी किसी के पास आना गिरना सम्भव है। विवाद की जड़ मतमतान्तरीय उपन्यास पुस्तकों को भगवद्वाक्य (आसमानी किताब) मानने जानने वालों को ही अनार्य्य समझो।

३—जिस पुस्तक में जिस किसी का जीवनचरित्र (लाइफ) अत्युक्ति के साथ देखो ईश्वरीय नियम (नेचर) विरुद्ध कथा वार्त्ता पाओ तो निश्चय जानो कि यह ग्रन्थ ईश्वर वाक्य (कलामुल्लाः) नहीं किन्तु किसी मतवादी पक्षपाती धर्मघाती लालबुझक्कड़ विद्याफक्कड़ की गढ़न्त है ३००० वर्ष से इधर का ही बना है। चमत्कार (मुअजिज़े) दिखाना मदारी भानुमती कासा इन्द्रजालिक स्वांग जानो॥

४—मौलवी अबदुल करीम जो एक किस्म के साईं फकीर थे जिन की ताजीम खातिर खानदानी मुसलमान और बड़े २ आलिम फाजिल करते हाफिज जी नाम से पुकारते थे किन्हीं उजड्ड लोगोंने उन का नाम कलाउड्डू रख लिया था उन के जबान से मैंने ही क्या सैकड़ों आदमियों ने सुना है वे हाथ बढ़ाकर बुलन्द आवाज से कहा करते थे "कि हमारे यहां कुरानशरीफ में गाय वगैरह जानवरों के जिवह करने, जूआ खेलने, शराब वगैरह नशे की चीजों के इस्तेमाल में लाने, गोश्त खाने, सूद लेने की सख्त मुमानियत है। गोश्त की पैदाइश बेरहमी से है बदकार बेरहम मुसलमान नहीं कहा जा सक्ता। ये लोग जिद जहालत से बमिस्ल तिफ्ल बे गुनाह जानवरों को खुदगर्जी से मार डालते हैं कुर्बानी के मानी खलकत की बिहबूदी बिहतरी के वास्ते जान व माल से इमदाद देने के हैं बल्कि हदीस में (जैसे तुम लोगों का धरम सास्तर) साफ लिखा है कि

(आबेहुल बकर) गाय वगैरह दूध देने वाले जानवरों का मारने वाला (कातिउल्शजर) मेवादार हरे भरे पेड़ों का काटने वाला (दायमुल्खुमर) शराब चरस अफीम वगैरह नशेकी चीजों का बनाने पीने वाला (नौमुस्तेद्र) फजर के वक्त सोने सुहवत करने वाला ये लोग दोजख के मुस्तहक हैं, इन की दुआ नमाज हर्गिज़ नहीं सुनी जायगी न इन की नजात होगी (बिस्मिल्लाः उलरहिमानी रहीम) खुदा पाक परवर्दिगार सब के लिये रहीम है। " हम भी मुल्ला जी की मुन्सफी का शुकरिया अदा करते हैं॥

५–मनुष्य जाति में परस्पर विरोध कराने वाले, निर्दोष वैदिक सिद्धान्त को दूषित करने वाले ईश्वरीय नियम विरुद्ध कुशिक्षा बोधक झगड़े की जड़ मज़हबी किताबों को जहां पाओ फाड़ दो फूंक दो। खोटा रुपया खोटामाल खोटामनुष्य खोटामत (मज़हब) विघ्नकारी होता है॥

६–(गोत्रं नो वर्द्धताम् २) अपना गोत्र वंश सम्बन्ध धर्म बढ़ाओ २ (दातारो वर्द्धन्ताम् २) राजा प्रजा मित्र गौ बैल भैंस घोड़ा भेड़ बकरी आदि लोकोपकारी मनुष्य पशु तथा छाया फलदार वृक्ष और यन्त्र तन्त्र को बढ़ाओ २ (असुरान्मारय २) असुर दैत्य दानव घातक पिशाच चोर डांकू निशाचर आदि दुष्ट जन्तुओं को मारो २॥

७–निश्चय जानो, प्रतीति मानो, विश्वास आनो, प्रयोजन छानो कोई स्वार्थी जन परमार्थी नहीं होता कोई सर्वभक्षक अनाचारी सर्वरक्षक सदाचारी नहीं हो सकता " स्पष्टवक्ता न वंचकः " स्पष्ट शुद्ध सत्य बोलने वाला वंचक ठग कदापि न होगा अतएव प्रत्येक जीव जन्तु की परीक्षा करके साम दाम दण्ड भेद द्वारा यथायोग्य वर्त्ताव करो॥

८–चोर डांकू निर्दय राक्षस निशाचर पिशाच चाण्डाल आदि विघ्नकारी को ताड़ने में पाप की अपेक्षा पुण्य अनन्तगुणा अधिक होता है जैसे एक व्याघ्र को मारने से गवादि सैकड़ों लोकोपकारी पशु बच सकते हैं इसी लिये मनु जी महाराज ने कहा है कि–

(यावानवध्यस्य वधे तावान् वध्यस्य मोक्षणे)

जितना पाप अवध्य निर्दोष को मारने में है उतना ही पाप वध्य दोष

भागी को छोड़ने बचाने में है । अर्थात् निर्दय नास्तिक अधर्मी के लिये दयावान् होना नहीं चाहिये ।

९–(नो दया मांसभोजिनः)

कोई भी मांसाहारी जन्तु सतोगुणी परोपकारी विश्वासपात्र दयावान् नहीं होता अर्थात् सब मांसाहारी अनर्थकारी तमोगुणी स्वार्थी निर्दय वंचक कुपात्र हुआ करते हैं । स्वप्न में भी किसी मांसभक्षक का विश्वास मत करियो और सुअर मुर्गी कछवा गुलगुचिया तीतर पण्डुक मछली आदि जलकीड़े मलभक्षियों के मांस की उत्पत्ति मल के रससे ही हुआ करती है इस कारण इन पशु पक्षियों का मांस खानेवाले तो सब प्रकार का मल खानेवाले पूरे म्लेच्छ हैं द्विजाति को तो मल में उत्पन्न हुए शाक तरकारी कन्द मूल भी नहीं खाना चाहिये ॥

(अभक्ष्याणि द्विजातीनाममेध्यप्रभवाणि च) मनु

१०—जिस किसी अच्छे चाल चलन वाले समझदार मुहम्मदी ईसाई से पूछिये यही कहेगा कि हमारे पितर ब्राह्मण चौबे दुवे ठाकुर जाट कायस्थ थे मुसलमान बादशाहों के ज़माने में किसी सबब से मुसलमान ईसाई हो गये अब भी हमारे घरों में आधा वर्त्ताव हिन्दू मजहब का सा होता है अथवा हमारे पिता पितामह तो क्षत्रिय थे अनाथ होने, काल पड़ने पर पेट के कारण ईसाई हो गये । अब क्या हो सकता है ? हमारा क्या दोष है हम गौ के ऊपर छुरी नहीं फेरते गोमांस नहीं खाते यदि ले सको तो हम हिन्दू होने में राजी हैं सम्यक् परीक्षोत्तर ऐसे भोले सीधे सादे सच्चे लोगों को वैदिकी शिक्षा देकर प्रायश्चित्त चान्द्रायण कराय ईश्वरोक्त सनातन धर्म में लाओ दिन भर का भूला भटका सांझ को अपने घर आजाय तो भूला नहीं गिना जाता ।

(नमो ज्येष्ठायचकनिष्ठायच नमोमध्यमायच नमोजघन्यायच)

११–छोटे बड़े समान नीच सब से नमस्ते कहा करो यह यजुर्वेद के १६ वें अध्याय का वाक्य है जिस का अर्थ (तुम आदर योग्य हो वा मैं तुम्हारा आदर करता हूं) है । सब मनुष्यों को परस्पर एक दूसरे का आदर सत्कार करना ही चाहिये वरन यह नमस्ते शब्द तो परमेश्वर देवता अध्यक्ष स्वामी मित्र बान्धव स्त्री पुत्र दासवर्ग सब के लिये उपयोगी है ॥

१२–जैसे सूर्य्य चन्द्रादि ग्रह उपग्रह नक्षत्र तारे आकाश में अपनी २ चाल से घूमते फिरते रहते हैं तैसे ही यह भूलोक भी निराधार अपनी गति से चला

करता है परन्तु (निरक्षरभट्टाचार्य) (पढ़ा न लिखा नाम महम्मद् फाज़िल) मूर्ख प्रमादी लोगों में से किसीने तो अपनी कपोल कल्पना से इस पृथिवी को बैल के सहारे किसीने कछुए के किसी ने सर्प्प के ऊपर ठहरी हुई बताया है बुद्धिमान् खोजी सज्जनों को सूर्य सिद्धान्त सुन लेना चाहिये किन्तु लालबुझक्कड़ विद्याफक्कड़ लोगों की बनावटी बातों का विश्वास कदापि न किया करें ॥

१३–सृष्टि के आदि से आर्य पुरुष प्रतिवर्ष गतवर्षों में १ । १ वर्ष बढ़ाते उन से युग मन्वन्तर बनाते अपने पुस्तक तिथि पत्रों में लिखते आये इस प्रामाणिक लेख से विक्रमी संवत् १९५४ तक १९६०८५२९९७ वर्ष व्यतीत भये । और भूगर्भ विद्या (जियोलौजी) पुस्तक में अंगरेज़ लोगों ने अपनी बुद्धि के अनुसार अनुमान से लिखा है कि यह दुनियां २४००००० वर्ष से पहिले की बनी मालूम होती है और यूरोपियन लौर्ड केलभिन्न विज्ञानवित् ने पुष्ट प्रमाण से सिद्ध किया है कि जगत् को बने ३००००००० तीनकरोड़ वर्ष भये । ईसाइयों की इंजील में ईसामसीह से ४००० वर्ष पहिले अर्थात् केवल ६००० वर्ष की बनी लिखी है प्रमाण कुछ नहीं दिया ॥

१४–जिस काल में पंचतत्त्व (पृथिवी जल अग्नि वायु आकाश) का परस्पर मेल होकर लोकव्यवहार होता है उस काल का नाम कल्प वा सर्ग ब्रह्मदिन है उस का प्रमाण ४३२००००००० चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष का है मन्वन्तर युग वर्ष आदि पता लगाने के लिये इसी के आन्तरिक भेद हैं जैसे भूखण्ड द्वीप प्रदेश आदि कहाते हैं । और जितने समय तक प्रकृति अर्थात् सृष्टि की सामग्री ईश्वरीय नियमानुसार छिन्न भिन्न दशा में रहती सब जीवात्मा घोर निद्रावश सुप्तावस्था में रहते उस का नाम प्रलय ब्रह्मरात्रि महारात्रि भी है इस के निदर्शन (नमूने) ४ प्रकार के हैं ॥

–जब कभी किसी धार्मिक राजा को मिथ्या दोष लगाकर कोई स्वार्थी बलवान् विदेशी राजा पदाधिकार छीनले तो मानो उस माण्डलिक राजा के लिये प्रलय कासा अनर्थ दृष्ट आजाता है अथवा कोई प्रपंची उपद्रवी किसी सज्जन के धन सम्पत्ति को अभियोग द्वारा जाल से हरले तो उस महाजन के लिये भी प्रलय कासा अन्धेर हो जाता है किम्बा किसी का सुलक्षण पुत्र पतिव्रता स्त्री का शोक भी एक प्रकार का प्रलय ही है वा जिस दिन जो मारा जाय वा अपनी मौत से ही देह छूट जाय उस के लिये वह दिन भी प्रलय काल ही है

और उत्पन्न होना मरना सोना जागना भी मानो कल्प प्रलय का नमूना है ॥

१५–१०० वर्ष के बीच ३ पीढ़ी मानी जाने पर कल्पारम्भ से विक्रमी संवत् १९५४ तक ५८८२४५९० के अनुमान पिता पितामह प्रपितामहादि सब के पितर व्यतीत हो चुके सब का गुण कर्म स्वभाव भिन्न २ होने से किसी का भी नया मत कल्पित उपन्यास सनातन धर्म नहीं हो सकता सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने ब्रह्मादि महर्षियों के द्वारा जो ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदअथर्ववेद लोकोपकारार्थ प्रकट कराये उन ही के अनुसार सम्पादन आचरण वर्त्ताव मनुष्यमात्र का धर्म कर्म जानो विद्यारूपी नदी का प्रवाह विद्वानों के हृदय द्वारा चला करता है उसी को परम्परा श्रेयस्करा जानियो ॥

१६–जातकर्मादि १६ संस्कार अवश्य कराओ परन्तु चूड़ा करण में शिखाथोड़ी सी चिह्न मात्र रक्खो काकपक्ष (पट्टे) कदापि न रक्खो स्मश्रु अर्थात् मुख के केश (डाढ़ी मूछ) छोटे रक्खो लम्बी चौड़ी चोटी धोती किसी असुर के सङ्ग मल्लयुद्ध लड़ाई होने पर उलझा देती है । वस्त्र सब के लिये सदा दृढ़ हरित रङ्ग के न संकीर्ण न विस्तृत होवें मनुष्य को सर्वदा सन्नद्ध सावधान रहना चाहिये चटकीले भड़कीले पतले विदेशी वस्त्र कभी मत पहिना करो ॥

१७-(न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः)

यह यजुर्वेद के ३२ अध्याय के तीसरे ३ मन्त्र की प्रतीक है जिस का स्पष्ट सीधा अर्थ यह है कि उस सर्वव्यापक सर्वनियन्ता सर्वाधार परब्रह्म परमात्माकी मूर्ति वा प्रतिमा नहीं है जिस का नाम महद्यश महादेव महाराजाधिराज जगद्विख्यात है वह निराकार निर्विकार निर्विघ्न निर्लेप होने से निर्गुण और सृष्टिकारक धारक मारक जड़चेतन का संयोजक विभाजक न्यायाधीश सर्वान्तर्यामी आदि असंख्य गुण विशेषण युक्त होनेसे सगुण कहाता है । मानो वह जगद्गुरु जगत्पिता विश्वकर्मा अनेक गुण युक्त होने से असंख्य नामों से पुकारा जाता है ॥

१८–ईसाई लोग ईसूमसीह को ही ईश्वरावतार (पितापुत्र) बतलाते हैं और मुसलमान लोग (मुहम्मदरसूलिल्लाः) मुहम्मद साहब को ही खुदा का पैगम्बर भेजा हुआ कार मुख्तार माने हुए हैं और बौद्धमती बुद्धदेव को (सर्वज्ञः सुगतो बुद्धो०) इत्यादि तथा पौराणिक लोग श्री राजारामचन्द्र श्रीकृष्णचन्द्र आदि २४ अवतार कहा करते हैं पच्चीसवां कलियुग में निष्कलंक अवतार नगर सम्भल

जिना मुरादाबाद में उत्पन्न होने का विश्वास किये हुए हैं । पर शास्त्र की रीति से उस अपरम्पार सर्वाधार हिरण्यगर्भ (सूर्य चन्द्रादि असंख्य लोक लोकान्तर जिस के गर्भ में हैं) का किसी प्रकार सिमटकर सिकुड़ कर क्षुद्र मलिन गर्भाशय में आना अतेव पराधीन जराग्रस्त होना पाया नहीं जाता ॥

१९-पाषण्डिनो विकर्मस्थान् वैडालव्रतिकाञ्छठान् ।
हैतुकान् वकवृत्तींश्च वाङ्मात्रेणापि नार्चयेत् ॥ १ ॥

वेद विरोधी पाषण्डियों का अधर्मी कुकर्मियों का बिलाव की चाल चलनेवाले स्वार्थी दुर्जनों का झूठे हीले बहाने करने वाले धूर्त्त शठ ठग वेषधारियों का बगुले की चाल चलने वाले नटखट बनावटी नम्रता वालों का वाणीमात्र से भी आदर सत्कार प्रणाम मत करियो ॥

२०-परमेश्वर ने वर्त्तमान सृष्टि के आदि में अपना नियम रूप चारों वेद अग्नि वायु सूर्य मनु आदि महर्षियों के मन में प्रकाश किये मनु अर्थात् ब्रह्माजीने भृगु आदि कई महर्षियों को वेदाशय सुनाया छन्दबद्ध होकर वंशक्रमागत डाक द्वारा हमारे पास आया है मनुष्यमात्र इसी के अनुसार अनुष्ठान किया करें ।

२१-कोई जीव जन्तु स्वतः अपनी मृत्यु से मरने वा माराजाने पर निर्जीव प्रेत मृतक मुर्दा लोथ लास कहाता है उस त्याज्य शव के मांस भक्षक म्लेक्ष पिशाच कहाते हैं ।

(पिशितं मांसमाचामति भक्षयति स पिशाचः)

यह धर्माधिकार सनत्कुमार जी का वाक्य है । कुलीन पुरुष रोगग्रस्त दशा में भी मांस न खावे ।

२२-चींटी से लेकर गौ हाथी घोड़ा तक, क्षुद्र घास से लेकर वट पीपल आम आदि तक, रंक से लेकर राजा तक जो जितना उपकारी जीव जन्तु है उस के पालने मारने में उतना ही पुण्य पाप मानना जानना चाहिये कौड़ी से लेकर मुहर तक मिलने खोजाने में हर्ष शोक समान नहीं होता ।

२३-दान मान, मनुष्य पशु पक्षी का गुण कर्म स्वभाव पहिचान के किया करो जो जितना लोकोपकारी जन्तु है उस को दिये का उतना ही पुण्य और जो जितना अपकारी है उस को सहायता दिये का उतना ही पाप है अर्थात् उस अन्न को खाके वह जितने जन्तुओं को मारेगा सतावेगा उस हत्या में तुम भी साक्षी हो जाओगे ॥

२४–किसी जीवजन्तु मनुष्य पशु पक्षी वृक्ष आदि को विना अपराध मत-मारो मत सताओ, वह भी सताया जायगा जो किसी को सतावेगा, जो जैसा बोवेगा वैसा लुनेगा जो किसी वस्तु को खावेगा उसी का गुण पावेगा जो जिसका मांस खावेगा उस का मांस भी खिलाया जायगा मांस शब्द का मुख्यार्थ यही है कि (माँ=मुझ को सः सो) जिस को मैं खाता हूं वह मुझ को भी खावेगा ।

२५–सन्धिकाल में परब्रह्म परमेश्वर का भजन कीर्त्तन नित्य किया करो प्रातःकाल की उपासना प्रार्थना दिनभर के लिये दुराचार से बचाती. सायंकाल की आराधना वन्दना रात्रि को व्यभिचार से रोकती है इस के सिवाय प्रार्थना का फल अभिमान की निवृत्ति ज्ञान की प्रवृत्तिकारक है ॥

२६–कोई सेवक अपने स्वामी के सन्मुख चोरी आदि बुरा काम नहीं कर सकता. वेद पाठ ब्रह्मयज्ञ से जब मनुष्य को विदित हो जाता है कि परमेश्वर यमराज न्यायाधीश मेरे चारों ओर बाहर भीतर से मुझ को देखता है तब दुराचार नहीं करने पाता यही उपासना का विशेष फल है स्तुति प्रार्थना आराधना धारणा उपासना वन्दना ध्यान सन्ध्या का एक ही अर्थ है किञ्चित् सूक्ष्म भेद है ।

२७–जो अविवेकी अनार्य नीच किसी मृतक के नामोच्चारण के द्वारा (बसीले) से प्रार्थना करने पर ऋण से मुक्त होने स्वर्गवास मिलने का भरोसा करते वे दुष्ट, पापाचरण कदापि नहीं छोड़ते उन के जी में झूठा विश्वास (ईमान) गड़ा पड़ा सड़ा रहता है कि दिन भर के हिंसा निन्दा आदि पाप कर्म सांझ की प्रार्थना से और रात्रि के किये चोरी व्यभिचारादि दोष सवेरे की वन्दना (दुआ) से छूट जावेंगे ।

धृतिःक्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकंधर्मलक्षणम् ॥

धृतिः=कर्मानुसार परमेश्वर के दिये धन बल में धैर्य सन्तोष करना ।
क्षमा=किसी नीच के कटु वाक्य को सुन कर शान्ति करना ।
दमः=मद विपरीतो दमः अभिमान छोड़ के मन को शान्त वशीभूत रखना ।
अस्तेय=चोरी ठगी प्रपंच बलात्कार से पर द्रव्य न लेना ।
शौच–मन देह वाणी से शुद्ध व्यवहार कर करना कराना ।

इन्द्रियनिग्रहः=५ ज्ञानेन्द्रिय ५ कर्मेन्द्रियों को वश में रखना ।

धीः=बुद्धि विवेकानुसार कार्य सम्पादन करना कराना ।

विद्या=ब्रह्मविद्या वा नीति विद्या का नित्य अभ्यास करना ।

सत्यम्=सच बोलना, सत्य को मानना सत्य का खोजना ।

अक्रोधः=क्रोध ईर्ष्या द्रोह वैरभाव विना कारण न करना ।

ये ही १० धर्म वा धारण करने योग्य धर्म के लक्षण हैं ।

यह श्लोक ब्रह्मा जी के जेष्ठ पुत्र भृगु जी ने अपने शिष्यवर्ग को सुनायाथा किसी प्रकार हमारे पास भी आगया । जैसे धार्मिक जनों को धर्म करते कराते उद्योगी जनों को राजपाट बढ़ते बढ़ाते शान्ति नहीं होती तैसे ही रसिक जनों को इस ग्रन्थ के पढ़ते पढ़ाते तृप्ति नहीं होगी ।

२९-परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसाऽनिष्टचिन्तनम् ।
वितथाऽभिनिवेशश्च त्रिविधंकर्ममानसम् ॥ १ ॥

परद्रव्य हरण की इच्छा करना मन से किसी का बुरा चाहना असम्भव असंगत ईश्वरीय नियम विरुद्ध बातों में विश्वास लाना ये ३ मानसिक पाप कहाते हैं ॥

३०-पारुष्यमनृतंचैव पैशुन्यमपिसर्वशः ।
असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयंस्याच्चतुर्विधम् ॥ २ ॥

कठोर असह्य वाणी बोलना झूठ वा अनहोनी बात बोलना पूर्वापरभिन्न वा पहिले के विरुद्ध पीछे बोलना चुगली खाना ये ४ वाणीमय पाप कहाते-वाणी द्वारा किये जाते हैं ॥

३१-अदात्तानामुपादानं हिंसाचैवाविधानतः ।
परदारोपसेवाच शारीरंत्रिविधंस्मृतम् ॥ ३ ॥

विनादिये पराया धन द्रव्य माल हरलेना विना अपराध मनुष्य पशु पक्षी वृक्ष स्थावर जंगम जीवजन्तु को सताना वा मारना। परस्त्री गमन वेश्यागमन करना ये तीन पाप कर्म शरीर द्वारा यक्ष रक्ष मूर्ख धूर्त्त नीच लोगों से हुआ करते हैं बुद्धिमान् मनुष्यों को उपरोक्त १० प्रकार के दुष्कर्म छोड़ देने चाहिये ॥

३२ (विनाप्यर्थैन धीरः स्पृशति बहुमानोन्नतिपदम्)

विद्वान् जितेन्द्रिय धीर वीर पुरुष (मर्द) विना धन के भी उच्च पदाधिकार पा सकता है । यह वाक्य नीति शिरोमणि बृहस्पति जी के पास हो कर हमारे पास आया है । जिस के दृष्टान्त परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी हैं जो ४९ वर्ष की अवस्था में वन से आये थे बुद्धि विद्या के बल से वैदिक यन्त्रालय उपस्थित किया कई एक पाठशाला विठला दीं और सैकड़ों गुरू घण्टाल पोप धूर्त्त शेखचिल्ली शास्त्रार्थ द्वारा पराजित परास्त किये सैकड़ों आर्य समाज स्थापन किये इत्यादि ॥

३३—और श्री महाराज रणजीत सिंह जी की अवस्था जब ८ वर्ष की थी तब ही इन के पिता चतुरसिंह (महासिंह) जी का देहान्त हो गया था यह महासिंह भोला सीधा धार्मिक और साधारण कक्षा का मनुष्य था परन्तु रणजीतसिंह ने अपने बल पौरुष सुमति सद्गति के प्रभाव प्रताप से यमुना पार सारा पंजाब काश्मीर लद्दाख और अफगानिस्तान तक अपने अधिकार में किया इन के अतिरिक्त पूर्वकाल में महाराजा भरत जिन के नाम से इस जम्बूद्वीप का नाम भरतखण्ड वा भारतवर्ष हुआ शकुन्तला ऋषि कन्या से उत्पन्न भये थे ।

३४—उत्साहसम्पन्नमदीर्घसूत्रम्-
क्रियाविधिज्ञं व्यसनेष्वसक्तम् ।
शूरं कृतज्ञं दृढसौहृदञ्च-
लक्ष्मीः स्वयं याति निवासहेतोः ॥

उत्साह सम्पन्न हौंसले वाला बहुत दूर भविष्यत् के मनसूबा न करने वाला समयानुसार वर्त्तावकारी प्रत्येक कार्य की विधि को जानने वाला चरस अफीम आदि दुर्व्यसन से पृथक् रहने वाला शूरवीर निरोग पथ्याहार करने वाला गुणज्ञ प्रत्येक मनुष्य पशु द्रव्य के गुण दोष को रूप देखते ही जान लेने वाला दृढ़ विश्वास पात्र विपत सहायक मित्र वाला हो तो ऐसे नरसिंह के पास लक्ष्मी निवास हेतु अपने आप चली आती है यह वचन सर्वोपरि धनाध्यक्ष कुबेर जी का है । अर्थात् इतने गुणग्रहण करलेने से निर्धन भी धनवान् होजा सक्ता है ।

३५ उद्यमं साहसं धैर्यं बलं बुद्धिः पराक्रमः ।
षडेते यस्य विद्यन्ते तस्माद्देवोऽपि शङ्कते ॥ १ ।

उद्यम साहस धैर्य बल बुद्धि पराक्रम ये ६ गुण जिस नरसिंह में होते हैं उस से सार्वभौम सम्राट् वा प्रारब्ध भी डरता है। उक्त गुणों को शीघ्र ग्रहण धारण करो॥

३६-वीर्यवन्तः क्षमावन्तो महोत्साहा महाशयाः।
स्वस्थानसंस्थिताः स्वस्था भवेयुः स्थिरबुद्धयः ॥१॥
साक्षराश्च सदाभ्यासाः सदा सत्कारसंयुताः।
एकावस्थाऽधिमात्राणां षड्भिर्वर्षैः प्रसिद्ध्यति ॥२॥

वीर्यवान् बलवान् पराक्रमवान् बुद्धिमान् उत्साहवान् क्षमावान् विद्यावान् गुणवान् महाशय गृहस्थ नित्यनीति विद्याभ्यास में तत्पर सब का यथायोग्य आदर करने वाले शान्तशील विवेकी दूरदर्शी दक्ष कुलीन धुरीण सज्जन छः हो वर्ष में अपना मनोभिलाप पूर्ण कर सकते हैं अर्थात् उच्चपद को प्राप्त हो सकते हैं। ये दोनों श्लोक चक्रवर्त्ती महाराजा मान्धाता जी के मन्त्री चित्रगुप्त जी के द्वारा हमारे पास आये हैं अन्यों के वाक्य भी आने की सम्भावना है॥

३७-त्रिभिर्वर्षैस्त्रिभिर्मासैस्त्रिभिः पक्षैस्त्रिभिर्दिनैः।
अत्युत्कटैः पुण्यपापैरिहैव फलमश्नुते ॥

३ वर्ष ३ मास ३ पक्ष ३ दिन में ही अति उत्कट उग्र पुण्य पाप का फल मनुष्य इसी जन्म में पा सकता वा खा सकता है। यह वाक्य राजा चन्द्र गुप्त के मन्त्री चाणक का है और महर्षि पतञ्जलि जी कहते हैं कि (तीव्रसम्वेगानामासन्नः) तेजी के साथ कार्य कर्त्ताओं के ऋद्धि सिद्धि भुक्ति मुक्ति समीप ही हैं।

३८-सत्यंतीर्थंक्षमातीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः।
सर्वभूतदयातीर्थं सर्वत्रार्जवमेवच ॥ १ ॥
ज्ञानंतीर्थंधृतिस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते ।
ब्रह्मचर्य्यंपरंतीर्थं तीर्थंचप्रियवादिता ॥ २ ॥
दानंतीर्थंदमस्तीर्थं पुण्यंतीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थानामपितत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसःपरा॥३॥

सत्यंतीर्थं क्षमातीर्थं=सत्य बोलना क्षमा करना तीर्थ है ।
तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः=ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रियों को दुराचार से रोकना तीर्थ है ।
सर्वभूतदयातीर्थम्=प्राणीमात्र पर दयाकरना न्यायदृष्टि से देखना तीर्थ है ।
सर्वत्रार्जवमेवच =सर्वत्र सीधी सादी चाल चलना तीर्थ वास है ।
ज्ञानंतीर्थं धृतिस्तीर्थम्=ज्ञान प्राप्त करना और धैर्य्यधारण तीर्थ है ।
सन्तोषस्तीर्थमुच्यते=सन्तोष करना प्रसन्न मुखरहना तीर्थ कहाता है ।
ब्रह्मचर्यंपरंतीर्थं=ब्रह्मचर्य हविष्यान्न भोजन तीर्थ सेवन है।
तीर्थंचप्रियवादिता=कोमल प्रिय वाणी बोलना तीर्थाश्रम है ।
दानंतीर्थं दमस्तीर्थं=सुपात्र कुपात्र देख दान देना गर्व न करना तीर्थ है।
पुण्यंतीर्थमुदाहृतम्=प्रत्येक पुण्य कार्य तीर्थ कहाता है ।
तीर्थानामपीति०=सर्वोपरि तीर्थ चित्त की शुद्धि का कारण वेदाभ्यास ही है ॥

३९ यस्य जना न वदन्ति महत्वं नो समरे मरणं विजयं वा ।
न श्रुतदानमहाधनतां वा तस्य भवः कृमिकीटसमानः ॥१॥

इस श्लोक का आशय पूर्वजों के द्वारा विदुर जी के पास आया फिर पुस्तक (पार्सल) द्वारा हमारे पास आगया जिस का अर्थ यह है कि जिस के महत्त्व गुरुत्व प्रभुत्व को कोई भी नहीं गाता कहता है । सहस्रों राक्षसों को मार के संग्राम में मरण वा विजय जिस का नहीं हुआ और जिस ने दस्युदानवादि शत्रुओं को जीत कर अपने वश में नहीं किया जिस ने वेद वेदांगादि सत्य सनातन शास्त्रों को नहीं सुना जिस ने कभी महात्मा गौ ब्राह्मणादि का दान मान से आदर सत्कार नहीं किया और न धर्म कार्य द्वारा विपुलधन संग्रह करके लोक में यश भागी हुआ उस का जन्म मल में उत्पन्न हुए कीड़े मकोड़े के समान निष्फल है। जैसे आज कल के अधिकांश भारतवासी नपुंसक नरपशु जिन के कौड़ी पास नहीं नाम के करोड़ीमल, लेने देने बोलने का अधिकार नहीं नाम महाराजसिंह इत्यादि ।

४०-अध्यापनमध्ययनं यजनंयाजनंतथा ।
दानम्प्रतिग्रहंचैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥१॥

यद्यपि भगवान् ने यह वाक्य ब्राह्मण जाति के पुरुषों को मनु जीके द्वारा बता जता सुना दिया था तथाऽपि इस कलिकाल में उन्ही ब्राह्मणों की सन्तति

अपना सनातन धर्म कर्म छोड़ अनाप सनाप काम करने लगे ऐसा देख उस अधर्मोद्धारक प्रजानाथ जगद्गुरु ने आज फिर हमारे पास भेजा है जिस का अर्थ भूले भटके लोगों के हितार्थ प्रकाश किया जाता है ।

उस विश्वकर्मा ने मनुष्य जाति के ४ भाग किये तन्मध्ये ४८ । ४० । ३६ न्यूनान्न्यून २५ वर्ष की अवस्था होने तक ब्रह्मचर्याश्रम में विद्या पढ़ना तत्पश्चात् यज्ञ नाम परोपकार उपदेश द्वारा करना कराना । सुपात्रों को अन्न वस्त्र देना आपत्काल में दान लेना भी ये ६ कर्म ब्राह्मण जाति के लिये ठहराये अर्थात् ऐसे परमोत्तम कार्य सम्पादक ब्राह्मण वर्ण कहा जावे (ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः) अन्यत्र भी कहा है (शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैव शूद्रताम्) अर्थात् मूर्खका पुत्र विद्वान् ब्राह्मण महापुरुष योगी हो सकता और पण्डित का बेटा मूर्ख शूद्र असभ्य अनार्य हो सकता है (कर्मणा वर्णतां गतम्)

४१-प्रजानांरक्षणंदान-मिज्याध्ययनमेवच ।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्यसमासतः ॥१॥

२५ । ३० वर्ष की अवस्था होने तक ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय रहकर निरन्तर वेद वेदांग धर्मशास्त्र नीतिशास्त्र भूगोल खगोल आदि लौकिक पारमार्थिक विद्योपार्जन करना तत्पश्चात् मनुष्य पशु पक्षी वृक्ष इन ४ प्रकार की प्रजा का इन्हीं के गुणानुसार रक्षण पालन पोषण करना कराना गो ब्राह्मण आदि लोकोपकारी जन्तुओं को अन्न वस्त्र आदि से सन्तुष्ट तृप्त रखना और यज्ञ नाम सर्वोपकार का है अग्निहोत्र न्याय वैदिकी पाठशाला मार्गशोधन सेतुबन्धन चिकित्सालय सेनाप्रबन्ध सभास्थापन आदि करना कराना अधिक स्त्रीप्रसङ्ग चरस भंग गांजा अफीम मदिरा नाच रङ्ग कौतूहल आदि १८ प्रकार के व्यसन विषय भोग से पृथक् रहना ये ५ कर्म संक्षेप से क्षत्रिय के कहे हैं ।

(ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा सद्यः प्राणान् परित्यजेत्)

ब्रह्मज्ञानोपदेशक के लिये तथा गो जाति की रक्षा के लिये बुद्धिमान् धर्मिष्ठ क्षत्रिय तत्काल प्राण त्याग करे अर्थात् ब्रह्मघातक गोघातक से अपना प्राण देकर भी ब्राह्मण, गौ की रक्षा ही करै करावै ॥

४२-कुलंचशीलंचसनाथताच, विद्याचवित्तंचवपुर्वयश्च।
एतान्गुणान्सर्वविचिन्त्यदेया, कन्याबुधैःशेषमचिन्तनीयम्॥

कन्या के पिता को चाहिये कि वर का कुल शील सनाथता विद्या शरीर अवस्था वित्त इन ७ गुणों को देख कन्यादान करै (शेषमचिन्तनीयम्) जन्मपत्र द्वारा ग्रहसाम्य की आवश्यकता नहीं है और महा वैद्य सुश्रुत जी ने भी कहला भेजा है ॥

(पंचविंशेततोवर्षे पुमान्नारीतुषोडशे)

२५वर्ष तक पुरुष ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय रहै १६ वर्ष तक कन्या तदुपरान्त स्वयंवर विवाह किया जावे (चक्रवाकेव दम्पती) इस अथर्ववेद के वाक्यानुसार एक ही विवाह करना चाहिये जैसे चकवा पक्षी एक स्त्री के होते हुए द्वितीय पत्नी नहीं करता ।

विवाह सम्बन्ध अति निकट एक गोत्र एक मुहल्ला एक ही ग्राम में तथा अतिदूर जहां से कुशल पत्र का आना भी दुस्तर हो, न होना चाहिये विवाह व्यय के वहाने से वर पिता वा वर पक्षी से धन लेने वाला कन्या मांस विक्रेता है वर आदि (वरात) वर कन्या के सहायक १० मनुष्य होवें ३ मासिक प्राप्ति से अधिक व्यय विवाहोत्सव में न होने पावे ।

४३-तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये । य०अ३१म०९

प्रलय काल पूर्ण होने पर सर्वशक्तिमान् पूर्ण पुरुष ने यथा पूर्व अनन्त ब्रह्माण्ड सूर्य चन्द्रादि लोकलोकान्तर को पञ्चतत्त्व से (जो पहिले कल्पान्त से परमाणु रूप उस की सत्ता में विद्यमान थे) बनाया तदनन्तर वनस्पति अन्न औषध घास पशु पक्षी जलचर स्थलचर नभचर मनुष्यादि उत्तम मध्यम अधम सब प्रकार के जीव जन्तुओं को कर्म फल भोग निमित्त (कल्पान्त में जिस के जैसे कर्म शेष रह गये थे, रचा अर्थात् असंख्य प्रकार के असंख्य जीव जन्तुओं को जितने कि आज कल विद्यमान हैं इतने ही के अनुमान जड़ चेतन के योग से एक ही काल में सृजा यह सिद्वान्त सृष्टिविषय में वेद का है । जो सर्वथा सर्वदा कुलीन शिष्ट पुरुषों को मान्य ग्राह्य है ॥

परन्तु नीच अन्त्यज म्लेच्छ सर्वभक्षक नरपशु अपनी झूठी कपोल कल्पना से एक ही एक जोड़ा स्त्री पुरुष से मनुष्यादि पशुपक्षियों की उत्पत्ति वतलाते हैं (आदम पहिला नर था ईभ (हव्वा) पहिली नारी थी) उन के मत में

आदम ईभ के बेटे बेटियों भाई बहिनों के बीच विवाह होना साबित है इस लिये वे लोग मौसेरी सौतेली चचेरी तयेरी ममेरी फुफेरी बहिन के साथ विवाह निकाह कर सकते हैं।

४४—ओंकारप्रभवा वेदा ओंकारप्रभवाः सुराः।
ओंकारप्रभवं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम् ॥ १ ॥
एतद्ध्येवाक्षरम्ब्रह्म एतदेवाक्षरं परम्।
एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा यो यदिच्छति तस्य तत् ॥२॥

लौकिक पारलौकिक ज्ञान के मूल चारों वेद स्वर्ग मर्त्य पाताल तीनोंलोक सूर्य चन्द्रादि ३३ जड़ देवता तथा ब्रह्मा विष्णु महादेव ब्रह्मर्षि राजर्षि गौआदि चेतन देवता और अन्न औषध आदि चर अचर पदार्थ स्थावर जंगम जड़ चेतन द्रव्य सब ओंकार से उत्पन्न हुए ॥ १ ॥

यही प्रणव नामक ओंकार अविनाशी ब्रह्म है और यही तेजोमय अक्षर सर्वोपरि सर्वाध्यक्ष है इसी का गुण कर्म स्वभाव जान विधि पूर्वक जप तप भक्ति ध्यान उपासना प्रार्थना करके जो मनुष्य भुक्ति मुक्ति जिस की इच्छा करता है उस के लिये वह पदाधिकार अवश्य प्राप्त होता है ॥ २ ॥

भाषाकवि तुलसीदास ने भी परामर्श दिया है।

दोहा—प्रभुता को सब कोई चहै, प्रभु को चहै न कोय।
तुलसी जो प्रभु को चहै, आजहि प्रभुता होय॥

४५—सर्वहिंसानिवृत्ताये नराःसर्वसहाश्चये।
सर्वस्याश्रयभूताश्च तेनराःस्वर्गगामिनः ॥ १ ॥

जो मनुष्य सब प्रकार की हिंसा हत्या से निवृत्त हैं अर्थात् विना अपराध स्वार्थ साधन निमित्त किसी मनुष्य पशु पक्षी वृक्ष वल्ली को नहीं सताते मारते और जो मनुष्य सब की कही निन्दा स्पर्धा अपमान दुःख सह लेते और जो उत्तम मध्यम निकृष्ट प्राणीमात्र का यथोचित आदर सत्कार करते हैं। वे ही इस लोक परलोक में स्वर्गगामी स्वर्गवासी होते हैं ॥

(सुखस्थानविशेषः स्वर्गः)

सुखस्थान का नाम स्वर्ग वा वैकुण्ठ है जहां पर दुर्गन्ध दुराचार दुर्जन म्लेच्छ पिशाचादि का भय नहीं जहां सुगन्ध सदाचार दिव्य भोजनाच्छादन सुलभ और

देवता महर्षि महात्माओं की संगति प्राप्त हो जहां हरिचर्चा वेदपाठ होम यज्ञ होता हो अर्थात् पृथिव्यादि सब लोक लोकान्तर में भाग्यवान् के लिये स्वर्गविद्यमान है ॥

(अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः)

स्वर्ग की कामना वाला मनुष्य अग्निहोत्र नामक महायज्ञ किया करे, जल वायु की शुद्धि द्वारा सब जीव जन्तुओं को सुख पहुंचाने वाले के लिये न्यायाधीश जगदीश अवश्य सुख धाम देता है ॥

४६–नामुत्रहिसहायार्थं पितामाताचतिष्ठतः ।
नपुत्रदारानज्ञाति–र्धर्मस्तिष्ठतिकेवलः ॥

मृत्यु के पश्चात् देह सम्बन्ध टूट जाने से परलोक वा परजन्म में जीवात्मा की सहायता के लिये माता पिता भाई बन्धु स्त्री पुत्र मित्र सम्बन्धी परोसी आदि कोई भी नहीं ठहरते अर्थात् अन्न वस्त्रादि से सहायता नहीं दे सकते केवल धर्म ही उस का सहायक रक्षक होता है । यह भगवान् मनु महाराज का वाक्य है । और यजुर्वेद के ३९ वें अध्याय में मृतक जन्तु के लिये चितादाह से पीछे और कोई संस्कार लिखा नहीं क्योंकि मरे पीछे जीव का पता न लगने से उस के नाम पर दिया हुआ द्रव्य भी यमलोक (वायुमंडल) में निराकार आत्मा के पास नहीं पहुंच सकता । और जन्म पाने पर शुभाशुभ कर्म लेन देन के हेतु वह किसी का पुत्र कन्या वा पशु पक्षी वृक्ष जलचर बन गया है किसी का पितर नहीं रहा ॥

काष्ठ घृत चन्दन कर्पूरादि सामग्री से प्रेत की भस्मगति (नरमेध) करणोत्तर गृहशुद्धि देहशुद्धि वस्त्रशुद्धि और चित्तशुद्धि निमित्त वेद वेदांगादि का श्रवण मनन अवश्य करना चाहिये । १० से ३० दिन के भीतर आशौच कर्म से निवृत्त हो जाया करो ॥

४७–काके शौचं द्यूतकारे च सत्यं,
सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्तिः ।
क्लीबे धैर्य्यं मद्यपे तत्त्वचिन्ता,
राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा ? ॥१॥

कव्वा गुलगुचिया कुक्कुट पण्डुक तित्तिरि शूकर मत्स्य आदि मलभक्षी जन्तुओं का तथा इन का मांस खाने वाले म्लेच्छ जाति के देह का शुद्ध होना, जुआरी व्यभिचारी अनाचारी चोर बटमार स्वार्थी लोभी कामी जन का सत्यवादी होना, सर्प शृगाल व्याघ्रवत् आचरण वाले निर्दय निर्घृण मांसाहारी अनर्थकारी के चित्त में शान्ति दया का होना, कुलटा कुचाली स्त्रियों में काम दाम की शान्ति तृप्ति होना, नपुंसक डरपोक भयातुर में धैर्य सन्तोष साहस का होना, शराबी कबाबी चरसी अफीमी मद्यप को तत्वज्ञान की चिन्ता निष्ठा जिज्ञासा होना, सर्वभक्षक स्वार्थी राजा का सर्वरक्षक परमार्थी होना (केन दृष्टं श्रुतं वा?) किसी ने देखा वा सुना भी है? अर्थात् नहीं देखा वा नहीं सुना होगा। क्योंकि परस्पर विरोधी दोष गुण एक ही काल में एक मनुष्य में नहीं ठहर सकते यथा महाकाली महागौरी महादानी महालोभी महामूर्ख महापण्डित महाअन्धकार महाप्रकाश॥

४८–गुणा गुणज्ञेषु गुणा भवन्ति–
ते निर्गुणम्प्राप्य भवन्ति दोषाः।
सुस्वादुतोयाः प्रभवन्ति नद्यः–
समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः॥

गुणवान् (कद्रदान) के पास जाने वा पाने से ही गुण होते कहाते हैं वेही गुण निर्गुण नीच के पास पहुंचने से दोष माने जाते हैं जैसा नदियों का सुस्वादु निर्मल जल समुद्र में जा मिलने से अपेय (खारी) होजाया करता है। भावार्थ यह है कि कुजाति कुपात्र कुशिक्षित लोग अर्थ का अनर्थ कर देते जैसे अद्वैतवादी अविवेकी गुप्त नास्तिक लोगों ने उपनिषद् और दर्शन शास्त्रोंका उलटा अर्थ किया जीवात्मा परमात्मा को एकही बतलाया है और किसी२ दानव ने मानवधर्मशास्त्र में भी अपनी कपोल कल्पना झूठे श्लोक बनाय मिला दिये किही राक्षसों ने ज्ञान प्रकाशमय सूर्यवत् वेद में भी अन्धकार दोष बताया है। श्रीधराचार्य कहते हैं कि–

(न वेत्ति यो यस्य गुणप्रकर्षं स तस्य निन्दां सततं करोति)

जो जिस के गुण की प्रकर्षता उत्तमता को नहीं जानता वह उस की वा-

रम्बार निन्दा ही किया करता है। नीति (मोरल) सब देश सब काल में सब के लिये मान्य हुआ करती है॥

४९-वसुमती पतिना न सरस्वती-
बलवता रिपुणाऽपि न नीयते।
समभिहारहरैर्न सहोदरै-
र्विबुधबोधबुधैरपि सेव्यते॥

सरस्वती जो विद्या है उस को न तो राजा हर सकता न बलवान् शत्रु छीन सकता न तस्कर चुरा सकता न सहोदर भाई दायभाग ले सकता ऐसे अनुपम अमूल्य गुप्त धन को केवल रसिक जन ही सेवा सुश्रूषा द्वारा महानुभाव आचार्य से ग्रहण कर सकता है॥

यह वचन राजा सत्यवाक् विद्वद्वर्य बृहद्रथ जी का है॥

प्रत्येक श्लोक छन्द वाक्य कई ग्रन्थों में पाया जाता है जिस ने जिस पुस्तक में देखा वा जिस के मुख से सुना वह उसी का बतलाता है॥

जैसे पिता पुत्रों को समझाता बताता है कि मुझ से पिता उस से माता कहो और उस से भाई बहिन वृक्ष पशु इत्यादि तैसे ही जगत् पिता जगद्गुरु परमेश्वर ने सृष्टि के आदि में ज्ञान का मूल मनुष्यमात्र के लिये चारों वेद अग्नि वायु सूर्य नामक पुरुष तथा ब्रह्मादि महर्षियों के द्वारा प्रकट करा दिये हैं और १४ शास्त्र १२ उपनिषद् ६ दर्शन ऋषि मुनि प्रणीत वेदों की टीकारूप भी मान्य ग्राह्य हैं शेष वेदविरुद्ध कपोल कल्पित पाषण्डग्रन्थ त्याज्य जानने चाहिये॥

५०-यावत् स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो-
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत् क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा यत्नो विधेयो महान्-
सन्दीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ?॥

श्री महाराजा विक्रमादित्य के कनिष्ठ भ्राता राजर्षि भर्तृहरि जी कहते हैं कि जब तक शरीर स्वस्थ नीरोग है। जब तक बुढ़ापा निर्बल्य दूर है जब तक आंख कान हाथ पांव आदि ज्ञानेन्द्रिय कर्मेन्द्रियों की शक्ति नष्ट भ्रष्ट नहीं हुई

जब तक आयु का क्षय नहीं हुआ मौत धौरे नहीं आई तभी तक बुद्धिमान् आर्य पुरुषों को आत्मज्ञान परमात्मज्ञान लोक परलोक का सामान प्राप्त कर-लेना चाहिये । विपज्जालग्रस्त हो जाने घर में आग लगने पर बुझाने के लिये कुआ खोदने का उद्यम (कीदृशः) कैसा किस काम का ? निष्फल है ॥

तात्पर्य्य यह है कि इस कलिकाल में जब तक महालक्ष्मी जगत्तारिणी सुख कारिणी दुःखहारिणी जगन्माता भयत्राता गोजाति का बीज विद्यमान है जब तक कहीं २ कोई २ नाम मात्र के राजा शेष हैं ही, जब तक गौतम भरद्वाज वशिष्ठ कुशिक आदि महर्षियों की सन्तति मध्ये कोई २ कहीं २ फलाहारी देशोपकारी धर्मोपदेशक दृष्ट श्रवणगत होते ही हैं। तब तक शीघ्र धर्म का जीर्णोद्धार कर लो॥

५१–उत्तमंप्रणिपातेन शूरंभेदेनयोजयेत् ।
नीचमल्पप्रदानेन समशक्तिंपराक्रमैः ॥

अपने से बलवान् प्रतापवान् दुष्ट को नम्रता पूर्वक उसकी प्रशंसा करके वश में करो । शूरवीर अन्यायी उपद्रवी को भेद से अर्थात् उसी के तुल्य वा उस से भी बलिष्ठ के साथ वैमनस्य युद्ध कराय परास्त कराओ नीच लोभी शत्रु को कुछ दे दिलाकर दबाओ और समानशक्ति वाले वैरी को पराक्रम वा छल बल से प्रहार संहार कर के निर्मूल करो ॥

५२–समानेहस्तपादादौ दैवाधीनेचवैभवे ।
योनिन्दांविन्दतेनित्यं समूर्खइव कथ्यते ॥

हाथ पांव आदि ५ कर्मेन्द्रिय आंख कान आदि ५ ज्ञानेन्द्रिय पूर्ण होनेपर जो धन सम्पत्ति पदाधिकार को दैवाधीन बतलाता है देश काल की निन्दा करता है सोही मूर्ख कहाने योग्य है जैसा कहीं२ कोई २ आलसी प्रमादी चरसी अफीमी उदासी सण्डे मुसण्डे गुण्डे ढच्चर के खच्चर ॥

५३–वित्तंबन्धुर्वयःकर्म विद्याभवतिपञ्चमी ।
एतानिमान्यस्थानानि गरीयोयद्यदुत्तरम् ॥

(वित्तम्) धनसम्पत्ति (बन्धुः) कुटुम्ब बाहुबल (वयः) अवस्था (कर्म) सदाचार और विद्या ये ५ आदर के स्थान वा पद हैं पहिले से दूसरा दूसरे से तीसरा गुरुतर उत्तमोत्तम जानना चाहिये अर्थात् (विद्या हि परमं धनम्)

५४—ब्रह्महत्यासुरापानं स्तेयंगुर्वङ्गनागमः ।
महान्तिपातकान्याहुः संसर्गश्चापितैःसह ॥ १ ॥
सुरावैमलमन्नानां पाप्माचमलमुच्यते ॥
तस्मात्ब्राह्मणराजन्यौ वैश्यश्चनसुरांपिबेत् ॥२॥

ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मोपदेशक महात्मा को मारना, मदिरा चण्डू का पीना, चोरी ठगी प्रपंच से परद्रव्य हरना, गुरुपत्नी राजपत्नी मित्रपत्नी से व्यभिचार करना, ये ४ महापातक कहाते हैं इनका कभी संसर्गस्पर्श भी नहीं करना चाहिये । निश्चय जानो मदिरा अन्नों का मल है जो गुड़ आदि को सड़ाकर चुवाया जाता है मानो मूत्र है इसका पीनेवाला मल का रस पीनेवाला है इस लिये द्विजाति (ब्रा० क्ष० वैश्य) को तो इसे पीना क्या छूना भी नहीं चाहिये । यह ब्रह्मा (मनु) जी का वाक्य है सामवेद में भी कहा है (यन्मनुरवदत्तद्भेषजम्) मनु जी का कथन अमृत स्वरूप औषध है ।

प्रत्यक्ष देखिये मदिरा चण्डू चरस अफीम भंग गांजा आदि मादक द्रव्यसेवी जन क्रोधी अनाचारी प्रमादी निर्बल निर्धन हो जाते इन ही को पक्षाघात वायु कम्पवायु पकड़ता है ॥

५५ "त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः"

यह कपिल मुनि प्रणीत सांख्यदर्शन शास्त्र का वाक्य है जिस का तात्पर्य यह है कि तीनों प्रकार के दुःखों का निर्बीज निर्मूल करदेना अत्यन्त पुरुषार्थ कहाता है । यद्यपि दुःख बहुत प्रकार के हैं पर वे सब इन्हीं तीन प्रकार के भीतर आसक्ते हैं । उन में से प्रथम आध्यात्मिक दुःख जो वात पित्त कफ जनित ज्वरादि से शरीर और मन के द्वारा जीवात्मा को होता है । द्वितीय आधिभौतिक जो दुष्ट शत्रु सिंह व्याघ्र सर्प वृक्ष आदि के द्वारा प्राप्त होता है । तृतीय प्रकार का दुःख आधिदैविक जो अतिवर्षण अवर्षण बिजुली भूकम्प महामारी आंधी लू ओला आदि दैवीदुर्घटना से होता है ।

इन तीनों प्रकार के दुःखों का निवारण निष्कासन विसर्जन अधोलिखित तपसाधन द्वारा हो जाता है। तप का विस्तारपूर्वक वर्णन पातंजल योगदर्शन

में लिखा है यहां पर संक्षेप से नामावली मात्र लिखते हैं यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि यह अष्टांग योग कहाता है जिस के अनुष्ठान से अष्टसिद्धि प्राप्त होती है। देखो जगद्वशीकरण नामक पुस्तक।

५६--नाकृत्वाप्राणिनां हिंसांमासमुत्पद्यतेक्वचित्।
नतुप्राणिवधःस्वर्ग्य-स्तस्मांन्मासं विवर्जयेत् ॥ १ ॥
अनुमन्ताविशसिता निहन्ताक्रयविक्रयी।
संस्कर्ताचोपहर्ताच खादकश्चेतिघातकाः ॥ २ ॥

विना प्राणियों की हत्या लिये उठाये मांस की उत्पत्ति नहीं हो सक्ती विना अपराध लोकोपकारी पशु पक्षियों का स्वार्थसाधन निमित्त घात करना परिणाम में कल्याणकारी नहीं अर्थात् कोई भी मांसाहारी सतोगुणी स्वर्गगामी नहीं हो सकता इस लिये सर्वथा सर्वदा सब प्रकार का मांस वर्जित करे (न-खावे) ॥ १ ॥ मारने की अनुमति सम्मति देनेवाला छांटने ब्योंतने वाला अस्त्र शस्त्र चलाने वाला मांस मोल लेने वाला वेचने वाला पकाने वाला परसनेवाला खानेवाला ये आठों मारने ही वाले अर्थात् हत्या में साक्षी हैं ॥ २ ॥

चारों वेद धर्मशास्त्र और महाभारतादि इतिहास ग्रन्थों में तो सर्वथा मांसभक्षण का निषेध ही पाया जाता है हमारे बान्धव सम्बन्धी द्विजाति (ब्रा० क्ष० वै०) जो हिन्दू वाममार्गी बनगये हैं इन लोगों ने विद्या विवेक की कमी के हेतु भेड़िया कुत्ता गिद्ध तथा नीच म्लेच्छ पिशाच अन्त्यज असुरों से मांसाशन सीखा हो ऐसा अनुमान हो सकता है ॥

५७-अस्थिस्थूणांस्नायुयुतं मांसशोणितलेपनम्।
चर्मावनद्धंदुर्गन्धि-पूर्णांमूत्रपुरीषयोः ॥१॥
जराशोकसमाविष्टं रोगायतनमातुरम्।
रजस्वलमनित्यंच भूतावासमिमन्त्यजेत् ॥२॥

विचार कर देखो तो इस नरदेहपंजर में रस्सी रूप नसों सहित हड्डी के खम्भे लगे हैं मांस रुधिर से लिपा हुआ बाहर कच्चे चमड़े से बंधा है। भीतर मूत्र विष्ठा कफ सिंघाण आदि दुर्गन्धित घृणित मल से भरा है और निर्बल्य बुढा-

पा रोग शोक कष्ट का घर है। पालन पोषण करते २ एक दिन अपने आप भी नष्ट भ्रष्ट होने वाला है तत्वज्ञानी आत्मज्ञानी को इसका मोह नहीं करना चाहिये।

भावार्थ यह है कि चर्म लोहू मांस नाड़ी वसा हड्डी शुक्र इन ७ धातुओं से बने क्षणभंगुर शरीर की रक्षा के लिये तथा आत्मीय कुटुम्बीय जनों के पालन पोषण निमित्त जीवहिंसा शिष्टनिन्द्य जाल प्रपंच कदापि मत करियो (भोक्तारो विप्रमुच्यन्ते कर्त्ता दोषेण लिप्यते) जीवात्मा के संग देहादि मित्र बान्धव कोई भी परिणाम को (मृत्युसमय) नहीं आने का सब पृथक् हो जावेंगे केवल तुम्हीं पकड़े जाओ गे।

५८-मृतश्चाहंपुनर्जातो जातश्चाहंपुनर्मृतः।
नानायोनिसहस्राणि मयोषितानियानिवै ॥१॥
आहाराविविधाभुक्ताः पीतानानाविधास्तनाः।
मातरोविविधादृष्टाः पितरःसुहृदस्तथा ॥२॥
अवाङ्मुखःपीड्यमानो जन्तुश्चैवसमन्वितः।
सांख्यंयोगंसमभ्यस्येत्पुरुषंपञ्चविंशकम् ॥३॥

श्रीमान् महामुनि वर्य यास्काचार्य स्वप्रणीत निरुक्त नामक ग्रन्थ द्वारा सूचित करते हैं कि-प्रत्येक मनुष्य अपने ताईं ऐसा समझै कि मैं कई वार उत्पन्न हुआ कई वार मरा अनेकानेक योनि धारण कीं, विविध प्रकार के आहारभोगे, नाना जन्तुओं के स्तन पिये, बहुतसी माता बनी थोड़े २ काल के लिये बहुतेरे पिता ठहरे असंख्य मित्र शत्रु हुए उलटे मुख से पीड्यमान मूत्र द्वार से उत्पन्न होता रहा। अब (पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम्) आवागमन रूप महाकष्ट के निवारणार्थ सांख्यशास्त्र योगशास्त्र के अभ्यास द्वारा विज्ञान प्राप्त करके २५ कला युक्त पूर्ण पुरुष परब्रह्म की आज्ञा पालन रूप तप करना चाहिये ॥

५९-वरंविन्ध्याटव्यामनशनतृषार्तस्यमरणम्-
वरंसर्पाकीर्णेतृणापिहितकूपेनिपतनम्।
वरंगर्त्तावर्त्तेगहनजलमध्येविलयनम्-
नशीलाद्विभ्रंशोभवतुकुलजस्यश्रुतवतः ॥

विन्ध्याचल की ऊपर वनी में जहां तृण भी उत्पन्न नहीं होता भूखा प्यासा ही मरजाना भला है, सर्प बिच्छू आदि नाना प्रकार के दुःखदाई कीड़े घासादि से भरे कुए में गिरना कूदना आत्मघात करना भला है, गहरी खाई कुण्ड में पड़ सड़ के बिलाजाना समाजाना भी भला है पर कुलीन द्विजाति (ब्रा० क्ष० वै०) का सनातन धर्म कर्म मर्म शर्म छोड़ शीलभ्रष्ट आचार भ्रष्ट हो के जाति च्युत होना भाई बन्धु इष्ट मित्र अरोसी परोसी को मुख दिखाना भला नहीं है ।

यह श्लोक इस लिये आया है कि कभी २ कोई २ अज्ञानी अविवेकी द्विजकुलोत्पन्न किसी वेदविरोधी पाषण्डी भ्रष्टाचारी के बहकाने में आकर अपना कुलधर्म छोड़ बैठते पीछे स्वार्थी निर्दय नीच लोगों के चक्र में आने कोल्हू में पिचने पिसने पर शोक सागर में डूब जाते हैं उनको पहिले ही सचेत सावधान रहना चाहिये ।

६०—वरं गर्भस्रावो वरमृतुषु नैवाभिगमनम्—
वरं जातः प्रेतो वरमपि च कन्यैव जनिता ।
वरं बन्ध्या भार्या वरमपि च गर्भेषु वसति—
र्नवाऽविद्वान् रूपद्रविणगणयुक्तोऽपितनयः ॥

गर्भपात होजाना भला है, उत्पन्न होके मरजाना ही भला है, स्त्री के पास न जाना ही भला है, मरा हुआ उत्पन्न होना भी भला है, कन्या का उत्पन्न होना भला है, स्त्री का वन्ध्या (बांझ) होना भला है, गर्भ में ही रहे मुख न दिखावे सो भी भला है परन्तु रूपवान् धनवान् बन्धुवान् होते हुए भी मूर्ख धूर्त्त पुत्र का होना भला नहीं है ॥

(कोऽर्थःपुत्रेणजातेन योनविद्वान्नधार्मिकः)

ऐसे बेटे के होने से क्या प्रयोजन? जो न विद्यावान् है न धर्मात्मा ही है । हे ! विद्यावल के कोते. वीर पुरुषों के पोते. कुम्भकर्ण की नींद सोते. शतरंज चौपड़ में समय खोते. भाग्य के लिये रोते. पिंजर के तोते. बड़ी २ उपाधि ढोते वेश्या पूजा में धन खोते. रोग वीज हृदय में बोते. नाम के बड़े हाथ जोड़ खड़े मनमहेश गोवर गणेश लोगो? तुम्हारी दुर्दशा देख सुन कर स्वर्गवासी मुनि जी ने कितना विलाप किया है तिस पर भी तुम न चेतो !!!

६१-वरंमौनंकार्य्यंनचवचनमुक्तंयदनृतम्—
वरंक्लैव्यंपुंसांनचपरकलत्राऽभिगमनम् ।
वरंप्राणत्यागोनचापिशुनवाक्येष्वभिरुचिः—
वरंभिक्षाऽशित्वंनचवरधनास्वादनसुखम् ॥

चुप हो रहना भला है. पर अनृत असत्य बोलना भला नहीं है ।
नपुंसक हो रहना भला है. परस्त्रीगमन वेश्यागमन भला नहीं है ।
प्राण त्याग करना भला है. चुगली निन्दा के धन से जीना भला नहीं है ।
भीख मांग के खाना भला है. चोरी ठगी से धन हरण करना भला नहीं है ।

भावार्थः—हे ! भोले भूले. छैले छबीले. भाइयो ! यह पुस्तक तुम्हारे ही लिये उतरा है होली में निर्लज्ज कुशब्द बकने वस्त्रों का सत्यानाश करने का बुरा चलन तोड़ो. दिवाली में जुवा व्यभिचार से मुख मोड़ो. वेद विरोधी पुराणों की गप्प शप्प छोड़ो वेदवाक्यानुसार उत्तमोत्तम कामों में तन मन धन जोड़ो. पंचतन्त्र नीति (विष्णुशर्मा संकलित) विदुरनीति बृहस्पतिनीति शुक्रनीति के अनुसार परस्पर प्रीति शास्त्र की रीति का अहर्निश बर्ताव करो कराओ. प्रातः सायं लक्ष्मी सूक्त (ओ३म् हिरण्यवर्णां०) का अर्थ सहित पाठ भी किया करो ॥

६२--वरंशून्याशालानचखलुवरोदुष्टवृषभः--
वरंनष्टापत्नीनपुनरविनीताकुलवधूः ।
वरंवासोऽरण्येनपुनरविवेकाऽधिपपुरे--
वरंप्राणत्यागोनपुनरधमागारगमनम् ॥

शून्या शाला (खाली कोठरी) भली. दुष्ट अनड्वान् की संगति भली नहीं,
स्त्री वियोग भला. पर व्यभिचारिणी कटुभाषिणी होना भला नहीं ।
जंगल का वास भला है. अन्यायी राजा के नगर में रहना भला नहीं।
प्राण त्याग करना भला है. नीच म्लेच्छ के घर मांगने को जाना भला नहीं है।

तात्पर्य यह है कि प्रत्येक कार्य्य का परिणामी फल शोच के व्यवहार बर्ताव किया करो छूत भूत को हृदय से घर से कुल से देश से निकाल दो, जिस मल मूत्र म्लेच्छ के स्पर्श से भक्ष्य पेय पदार्थ का गुण विकारी हो जाय उसी की

छूत माना करो। प्रत्यक्ष देख लो सुन लो पूछलो काश्मीर पांचाल बंगाल प्रान्त में इस छूत दूत रूपी भ्रम का भय कम है केवल मध्य देश में ही इस पाषण्ड की लीला चल निकली है। महाराजा रणजीतसिंह ने भी पहिले छूत रूपी घरेलू शत्रु के परिहार से ही विजय पाई छूत के त्याग से ही मुहम्मदी लोगों के बीच अधिक मेल रहता है यूरोपियन (अंगरेज़) लोग तो इस के लिये प्रत्यक्ष दृष्टान्तही हैं॥

६३—क्वचिद्भूमौशय्या,क्वचिदपिचपर्य्यंकशयनम्-
क्वचिच्छाकाहारी,क्वचिदपिचशाल्योदनरुचिः।
क्वचित्कन्थाधारी, क्वचिदपिचदिव्याम्बरधरो-
मनस्वीकार्य्यार्थी, नगणयतिदुःखंनचसुखम्॥

कार्य्यार्थी मनस्वी धीर वीर पुरुष (चक्रवत् परिवर्त्तन्ते दुःखानि च सुखानि च) इस वाक्य पर भरोसा करके सुख दुःख में हर्ष शोक नहीं करते. वे लोग कभी तो भूमि में ही सोते लेटते हैं कभी पलंग में आराम करते. कभी शाक तरकारी रूखी सूखी रोटी से ही दिन काट लेते. कभी क्षीरभोजन पाते खाते हैं कभी बोदे फटे पुराने कपड़े हैं कभी दिव्य वस्त्र पहिनते हैं तब वे राज्यशासन सिंहासन प्राप्त कर सकते हैं। कहावत है कि (कभी घी घना कभी मुट्ठी भर चना कभी वह भी मना)॥

यह श्लोक उन महाराजा विक्रमादित्य का प्रसाद है जिन की राजधानी उज्जयिनी (उज्जैन) थी जिन का संवत् १९५४ प्रसिद्ध प्रचलित है जो तपस्वी मनस्वी चटाईपर सोते थे जिस ने ९३ वर्ष निष्कण्टक राज्य किया जगद्विख्यात विद्याविशारद राजा भोज इसी वंश में उत्पन्न हुए थे॥

६४—यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याᳬ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय। यजु२६अ०२मन्त्रहै।

हे! मनुष्यो यह कल्याणकारिणी वाणी वैदिकी शिक्षा सम्पूर्ण प्राणीमात्र की हितकारिणी क्लेशहारिणी है इस के पढ़ने सुनने का अधिकार बुद्धिमान् ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अन्त्यज आदि चाण्डाल पर्यन्त सब को है अर्थात् अमृत सब के लिये गुणकारी द्रव्य है॥

जब चारों वेद पढ़ने का अधिकार परमेश्वर की ओर से चारों वर्णों को है तो इस गायत्री मन्त्र—

ओ३म्–भूर्भुवःस्वः–तत्सवितुर्वरेण्यम्, भर्गो-देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

यजुर्वेद के ३ अध्याय का ३५ मन्त्र पढ़ने का अधिकार मनुष्यमात्र को क्यों न हो जिस का संक्षेपार्थ अधोलिखित है।

जिस परमात्मा का मुख्य नाम ओंकार है. जो सम्पूर्ण जन्तुओं का प्राणदाता तथा प्राण से भी प्रिय है. जो अपने भक्त लोकोपकारी सज्जनों के दुःख को दूर कर देता है. जो सर्वव्यापक सर्वनियन्ता सर्वान्तर्यामी है. हम उसी ज्ञानस्वरूप तेजस्वरूप निराकार निराधार मंगलमय न्यायकारी परब्रह्म परमोदार का ध्यान भजन स्मरण कीर्त्तन करते हैं वह हमारी बुद्धि शुद्धि के लिये हम पर सदा प्रेरणा करे।

६५–यस्यात्मबुद्धिःकुणपेत्रिधातुके-
स्वधीःकलत्रादिषुभौमइज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धिःसलिलेषुकर्हिचिज्-
जनेष्वभिज्ञेषुसएवगोखरः॥ १॥

यह वोपदेव कृत भागवत के दशम स्कन्ध का श्लोक है जिस का पदार्थ यह है कि जिस की वात पित्त कफ जनित मिश्रित शरीर में आत्मबुद्धि है अर्थात् शरीर को ही आत्मा जानता है और जो कोई स्त्री पुत्रादि में ये मेरे हैं ऐसी बुद्धि करता थोड़े दिन के लिये संयोग हुआ नहीं जानता और जो कोई प्रस्तर सुवर्ण रौप्यादि भूमि के विकारों में पूज्य बुद्धि करता अर्थात् मृत्तिका पाषाण काष्ठ लोह पित्तल रत्नादि से बनी जड़ मूर्त्ति को चेतन मान कर पूजता है इससे नवनिधि सकलसिद्धि भुक्ति मुक्ति मिलने की आशा करता है। और जो कोई नदी बावरी कुआ पुष्कर घाट ताल झील सरोवर आदि जलाशयों में तीर्थबुद्धि करता है। (ब्रह्मचर्यं परं तीर्थम्) सदाचार सत्संग को तीर्थ नहीं जानता ये सब मूर्ख अनार्य लोग बैल गधा के सदृश बुद्धि विवेक शून्य नरपशु हैं। हम शोचते हैं कि सनातन धर्माभिमानी (भूत प्रेत पूजक) पौराणिक इस श्लोक के अभिप्राय पर अवश्य ध्यान देवेंगे॥

षष्ठाध्याय भविष्यद्वाणी–

१–जिस की प्रशंसा रांड़ भांड़ सांड़ भाट वेषधारी अनर्थकारी वामाचारी व्यभिचारी जुआरी स्वार्थी लुच्चे टुच्चे लुंगाड़े ठग नशाबाज़ करेंगे वह धनिक अवश्य उजड़ जायगा ॥

२–जो राजा स्वेच्छाचारी विषयभोगी प्रजापीड़क उन्मत्त होजायगा निश्चय जानियो उस के राज्यशासन की अवधि बहुत थोड़ी शेष रह जायगी ॥

३–जैसे मक्खी घाव रुधिर पीप मल को ढूंढ़ती फिरती है: गिद्ध गीदड़ लोथ लाश प्रेत की खोज करते हैं तैसे ही नीच धूर्त्त वेदविरोधी इस पुस्तक की भूल चूक देखा खोजा करेंगे ॥

४–गोजाति को जगन्मातृ दुग्धदातृ आयुकर्तृ तुष्टिकर्तृ पुष्टिकर्तृ रोगहर्तृ तथा वृषभ को जगत्पितृ जगत्भ्रातृ जगत्पालक जगत्सहायक लेख देख के निर्गुणानन्दी निर्दयानन्दी निरक्षरानन्दी हास्य और निन्दा करेंगे । और गोजाति के वैरी तो सुनते ही मारे क्षोभ के उद्विग्न उन्मत्त हो समारोह के साथ कोलाहल करनेको उद्यत होवेंगे ॥

५–बुद्धमत जैनमत शैवमत शाक्तमत वैष्णवमत अद्वैतवादमत और ईसाई मूसाई महम्मदी मजहब कपोलकल्पित उपन्यास हैं ३००० वर्ष से इधर के लोगों की गढ़ना परस्पर विरोधी हैं । सूर्यवत् आर्यधर्म के प्रकाश होने पर अन्धकार के तुल्य मतमतान्तर निर्मूल हो जावेंगे खद्योत (जुगनू) के सदृश इन की टिमटिमाहट दब जायगी ।

६–अनुमान २००० वर्ष से इधर जगन्माता गोजाति के ऊपर निर्दय दूरदर्शी घातक लोगों के द्वारा जैसी विपत्ति आ रही है किसी से छिपी नहीं है। यदि इस महाअनर्थ के निवारण का उपाय शीघ्र न किया जायगा तो कालान्तर में दूध घी के दर्शन दुर्लभ हो जायंगे द्विजाति (ब्रा० क्ष० वै०) का निर्वाह कठिन हो जायगा ॥

७–इतिहासों के देखने सुनने से विदित होता है कि कल्प के आरम्भ से १९६०८५०००० वर्षतक सूर्यवंशी तथा चन्द्रवंशी आर्यराजाओं ने निष्कंटक सार्वभौम चक्रवर्त्ती राज्य किया वह समय नहीं रहा एवं कालचक्र सदैव लौट पौट करता रहेगा । अभी तो वर्त्तमान कल्प के २६५९१४७००० वर्ष शेष हैं हम शोचते हैं कि गोवधादि महाअनर्थ के निवारण निमित्त कोई साहसी दयावान् अष्टांग योग रूप तप अवश्य करता होगा ॥

८—अल्लाह के नाम पर लड़ो. अल्लाह ने काफिरों के दिलों और कानों पर मुहर करदी. काफिरों के वास्ते पत्थर तयार किये गये जब कि तारे गदले हो जावें जब कि सूर्य लपेटा जावे जब आसमान की खाल उतारी जावे इत्यादि ऐसे असम्भव असंगत अनर्थक उपन्यास मत मज़हबी स्वार्थी अशान्ति प्रचारक अविद्या वर्धकों के बनाये कभी निर्मूल निर्बीज हो जावेंगे जब सत्य धर्म का सर्वत्र प्रकाश प्रादुर्भाव होगा ॥

९—अनार्य अविवेकी अनभ्यस्त लकीर के फकीर उजड्ड अनगढ़ औघड़ मूर्ख धूर्त गंवार निज मत पन्थ के उत्पादक लालबुझक्कड़ की मिथ्या प्रशंसा का खण्डन और झूठे मत मज़हब की कलई खुलती देख इस ग्रन्थकार की निन्दा (शिकायत) करेंगे और समझदार खबरदार कुलीन (खानदानी) विज्ञ लोग अपने मत मज़हब की भूल चूक निकल आने पर प्रसन्न मुख होंगे आगे को असम्भव बातों पर विश्वास (ईमान) लाना छोड़ देवेंगे ॥

१०—निश्चय जानियो जब जिस के पुण्य कर्म फलक्षीण हो जावेंगे मदिरापान मांस भक्षणादि दुष्कर्मों के संस्कार अधिकांश एकत्र हो जावेंगे दुर्दशा समीप आजायगी वह इस पुस्तक में लिखे सत्य शुद्ध वाक्यों की निन्दा किया करेगा ॥

११—जब से करोड़ीमल्ल लक्षपतिराय हज़ारीलाल लक्ष्मीचन्द विद्यासागर बुद्धिसागर वेदान्ती महाब्राह्मण चतुर्वेदीय त्रिवेदीय त्रिपाठी द्विवेदीय शुक्ल नित्यानन्द धर्मानन्द परमानन्द त्रिलोकसिंह दिग्विजयसिंह राजेन्द्रसिंह प्रतापसिंह गोपालसिंह गोविन्दसिंह रणधीरसिंह शूरवीरसिंह बहादुरसिंह बलवन्तसिंह यशवन्तसिंह कीर्त्तिपाल भूपाल जगन्नाथ लोकनाथ पशुपतिनाथ विश्वम्भरनाथ शंकर धर्मराज प्रेमराज क्षेमराज गुणानन्द विवेकानन्द दीनदयालु प्रजापति आदि नामानुसार लोग काम भी करने लगेंगे विना गुण के नाम को निरर्थक निष्फल जानेंगे तब से समय परिवर्त्तन होने लगेगा अर्थात् सत्ययुग के लक्षण दृष्ट आवेंगे ॥

१२—जब तक द्विजाति (ब्रा० क्ष० वै०) मद्यमांस और प्रमाद आलस्य आदि दोष त्याग न करेंगे. जब तक चारों आश्रम (ब्रह्मचर्य गृहस्थाश्रम वानप्रस्थ सन्यासाश्रम) का विधिपूर्वक सेवन सम्पादन पालन नहीं होगा. जब तक जा-

त्यभिमान न छोड़ेंगे. जब तक ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य का खान पान में मेल न होगा. जब तक भूत प्रेत पूजा जड़ मूर्त्ति पूजा निवारण विसर्जन न होगी. जब तक सब लोग एक ही परमेश्वर के उपासक न बनेंगे तब तक भारतोद्धार दूर जानियो ॥

१३– जब श्रीरामचन्द्रादि प्रजापालक धार्मिक राजाओं की सन्तान व्यभिचारी अनाचारी उन्मत्त अशक्त नष्ट भ्रष्ट हो जायगी. जब कोशजोड़ू प्रजानिचोड़ू यक्ष राक्षस सर्वाधिकारी शासनकारी शस्त्रधारी होजावेंगे. जब प्रजा अन्न वस्त्र के विना बिलबिलाती हुई अनाप सनाप काम करने लगेगी. जब जाड़ा गर्मी वर्षा ऋतु के प्रतिकूल होने लगेगा. जब कहीं अतिवृष्टि कहीं अनावृष्टि दुर्भिक्ष भूकम्प आदि अनेक प्रकार के उपद्रव नाना प्रकार के अज्ञान रोग उत्पन्न होने लगेंगे. जब जहां तहां असाध्य क्लेश उपस्थित होने से संसार में हाहाकार फैल जायगा. जब सर्वोपकारी सर्वहितैषी धर्मोपदेशक सत्योपदेशक तथा जगन्माता जगत्पिता जगत् सहायक गौ बैल आदि पशु पक्षी विना अपराध सताये मारे जावेंगे जब सर्वभक्षक निर्दय नीच शिक्षक बनेंगे. जब प्रजा के बीच खैंचातानी होने लगेगी धर्माधर्म की किसी को नहीं सूझेगी. तब कोई जीवन्मुक्त दयायुक्त महापुरुष सन्नद्ध कटिबद्ध होकर लौकिक धर्म कर्म का संशोधन करेगा शेष तपस्वी तेजस्वी धार्मिक जन उस के सहायक कर्मचारी बनेंगे ॥

१४–मज़हब यह अरबी भाषा का शब्द इस देश में भी चल निकला है जिस के मानी तहज़ीब तरीक़ा तर्ज़ रहनुमा बतलाते हैं हमारी बोली में मज़हब का अर्थ मत पन्थ ढंग उपन्यास है कहावत प्रसिद्ध है कि (झगड़े की जड़ मज़हब) जैसा महर्षि ब्रह्मा जी को चतुरानन मुख वाला बताना रावण लंकाधीश के १० शिर २० भुजा पांव दोही (कार्त्तिकेयो महासेनः शरजन्मा षडाननः) राजा कार्त्तिकेय का बाण से उत्पन्न हो ६ मुखी होना (अगस्त्यः कुम्भसम्भवः) अगस्त्य मुनिका घड़े से उत्पन्न होना ७ समुद्र के जल को एक ही बार पीजाना फिर मूत कर भर देना । राजा कर्ण को सूर्य का वर पुत्र कुन्ती के कान से उत्पन्न हुआ बताना कबीरजी का फूल की टोकरी से पैदा होना प्रभू मसीह का अपने कन्धे में चढ़कर तीनों लोक की यात्रा पल भर में करना सूर्य को निगल जाना और लूत की मृत पत्नी का लवणस्तम्भ ब-

नजाना मुक़ाम वैतुल में पत्थर का खम्भ परमेश्वर का घर होना। हज़रत ईसामसीह का (स्त्री पुरुष के संयोग विना ही) कुमारी के गर्भ से उत्पन्न होना ५ रोटी २ मछलियों से ५००० भूखे तृप्त करना क्रूस पर ठोंके मारे गाड़े जाने के पीछे तीसरे दिन लाश का उठकर उड़कर आसमान में खुदा के दाहिनी ओर बैठना और किसी पैगम्बर के ऊपर कभी २ खुदा के फरिश्तों का उतरना पेट फाड़ अंतड़ियां दिल धोके फिर ज्यों का त्यों कर देना शकुल कमर चांद के टुकड़े वगैरह मुअज्जिज़े दिखाना इत्यादि। परमेश्वर की कृपा से न्याय स्वरूप सत्य सनातन वैदिक धर्म का प्रकाश प्रचार होने पर ये सब कल्पित मत मतान्तर (मज़हब) नष्ट भ्रष्ट हो जावेंगे॥

सप्तमाध्यायमुक्तिविषय

१-(दुःखाभावादपवर्गः)

जिस अवस्था में जन्म मरण भूख प्यास रोग शोक रोक टोक आदि सब दुःखों का अभाव होजाय उसी को मुक्तावस्था वा मुक्ति कहते हैं।

२—वेदाभ्यासेनसततं शौचेनतपसैवच।
अहिंसयाचभूताना-ममृतत्वायकल्पते॥

प्रतिदिन वेदाभ्यास करने से शौच सन्ध्या वन्दना से तपस्या वा सहन शीलता से प्राणीमात्र पर द्रोहभाव छोड़ने से हिंसा निन्दा के परित्याग से मोक्ष के योग्य होता है॥

३—मुक्तिमिच्छसिचेत्तात विषयान्विषवत्त्यज।
क्षमार्जवदयाशौचं सत्यंपीयूषवत्पिब॥

हे! प्रिय यदि मुक्ति चाहता है तो विषय भोगों को विषवत् विसर्जन कर इन के पलटे क्षमा सरलता दया शौच सत्य का अमृतवत् सेवन ग्रहण किया कर अर्थात् मुक्तिपद ऐसा सुगम सुलभ नहीं है जो किसी मृतक के नामोच्चारणमात्र से किसी को मिल जावे।

मुक्त जीव कहां रहता है किस विधि से निर्वाह करता है सो लिखते हैं। यजुर्वेद के अध्याय १७ के मन्त्र ६० से ७१ तक का तात्पर्य यह है कि जो ब्रह्म सर्वत्र पूर्ण है उसी में मुक्त जीव अव्याहत गति (विनारोकटोक) निःशङ्क लोक लोकान्तर में सर्वत्र विहार करता है। उस समय मुक्त जीव के संग ५ ज्ञानेन्द्रिय ५ कर्मेन्द्रिय मन और बुद्धि ये १२ मुख्य प्रयोजनीय बीजरूप शुद्ध गुण तो रहते हैं पांच भौतिक स्थूल (शरीर) संग नहीं रहता केवल साररूप शक्ति मात्र से ही परमानन्द भोग करता है उस का परमाणु रूप देह दृष्ट वा गणना में नहीं आता इसी लिये मुक्त जीव विदेह कहाता है॥

कभी २ कहीं २ किसी २ मुमुक्षु (मुक्ति की इच्छा करने वाले पुरुष) का चित्त संसार से विरक्त हो वैराग्य में जा मिलता है तो उस को भी मानापमान में हर्ष शोक नहीं होता किन्तु स्थूल दृश्य शरीर होने से भूख प्यास से पृथक् नहीं हो सक्ता वह किसी की हानि नहीं चाहता यथाशक्ति लोकोपकार ईश्वराज्ञापालन रूप तप में ही तत्पर रहता है ऐसे जगन्मित्र को भी जीवन्मुक्त कह सकते हैं जैसे राजा जनक श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वती आदि॥

अब काया छोड़े उपरान्त मुक्त जीवात्मा की दशा का प्रकार लिखते हैं।

(शृण्वन् श्रोत्रं भवति स्पर्शन् त्वग्भवतीत्यादि)

जब सुना चाहता है तब कान जब स्पर्श किया चाहता है तब त्वचा देखने के संकल्प से चक्षु स्वाद के अर्थ जिह्वा गन्ध के लिये नासिका विचार के लिये मन निश्चय के लिये बुद्धि स्मरणार्थ चित्त इत्यादि सब कार्य्य शुद्ध सूक्ष्म सामग्री से ले सकता है अर्थात् बल पराक्रम आकर्षण भीषण विवेचन उत्साह स्मरण निश्चय प्रेम द्वेष संयोग वियोग संयोजक विभाजक श्रवण स्पर्शन दर्शन स्वादन गन्ध ग्रहण ज्ञान गति क्रिया इच्छा यह २४ प्रकार का सामर्थ्य मुक्तजीव के पास गुप्त रूप से उपस्थित रहता है॥

(अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्)

पूर्व २ अनेक जन्मों का सिद्ध शुद्धाचारी पुरुष ही परांगति मुक्ति को पा सकता है (ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः) विना अर्थ सहित वेद पाठ किये तदनुसार अनुष्ठान आचरण किये विना मुक्ति नहीं हो सकती अथवा यों कहिये विना सर्वांश

ऋण चुकाये वा धनी की भक्ति किये मुक्ति कदापि नहीं हो सकती । और तत्वज्ञानी वा ब्रह्मध्यानी पुरुष की चाहे कोई कितनी ही हानि करे चाहे जि-तना दुःख देवे वह राजसभा (न्यायालय) में अभियोग (मुकद्दमा) नहीं चलाता

शय्याऽऽसनस्थोऽपिपथिव्रजन्वा
स्वस्थःपरिक्षीणवितर्कजालः ।
संसार वीजक्षयमीक्षमाणः—
स्यान्नित्यमुक्तोऽमृतभोगभागी ॥ १ ॥

मुमुक्षु (मोक्ष की इच्छा करने वाला) पुरुष चाहे शय्या वा विष्टर में सो-ता लेटा हो, अथवा किसी प्रकार के आसन पर बैठा हो, वा मार्ग में चलता फिरता हो, (संसारवीजक्षयमीक्षमाणः) आवागमन से छूटने की इच्छा वाला, कुतर्क वितर्क जाल जंजालरूपी विचारों को छोड़े हुए केवल परब्रह्म पर-मात्मा मुक्तिदाता भयत्राता का ही ध्यान करता हुआ (अमृतभोगभागी) मो-क्षपद पाने के योग्य होता है ॥

(तृणं ब्रह्मविदः स्वर्गः) ब्रह्मज्ञानी मुक्त पुरुष स्वर्ग के सुख को भी तृण के समान तुच्छ समझता है, शूर वीर नरपुंगव जीवन को तृणवत् जान लोकोपकार में लगादेता है, जितेन्द्रिय महापुरुष स्त्रीसुख को तृण के सदृश क्षणभङ्-गुर मानता, निस्पृह निर्लोभ निर्मोह ब्राह्मण जगत् भर के चक्रवर्ती राज्य सुख को भी तृण के तुल्य समझता ॥ अब हम परमेश्वर की प्रार्थना कर के ग्रन्थ स-माप्त करते हैं ॥

प्रार्थना

ओ३म्–सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु। दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु । योस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥ य० ३६ । २३

हे ! सर्वरक्षक सर्वाधार सर्वोत्पादक परब्रह्म परमात्मन् आप की कृपा से अन्न जल ओषधि हम लोगों के लिये गुणकारी होवें । तथा वे ही आप के रचे पदार्थ हमारे शत्रुओं के लिये अपगुण कारी हों, जिस से हिंसक निन्दक वंचक लम्पट दैत्य दानव स्वार्थी पक्षपाती धर्मघाती वेदविरोधी नास्तिक आदि दुष्ट शीघ्र निर्मूल निर्वीर्य हो जांय सब उपकारी जीव जन्तु आप की आज्ञा पालन में सदा तत्पर रहें ।

ओ३म् परमेश्वराय सच्चिदानन्दानन्ताय नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वरूपाय न्यायकारिणे सर्वशक्तिमते अजाय सर्वान्तर्यामिने दयापूर्णाय नमोनमः ।

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

जिन २ देश हितैषी सज्जनों ने इस पुस्तक को पढ़कर वा सुनकर मुद्रापणार्थ सहायता दी उन के नाम ये हैं ॥

पं० जयकृष्ण जी पांडे ठेकेदार—नयनीताल	५)
लाला प्यारेलाल सरिश्तेदार अदालत असिष्टयंट कमिश्नरी तराई	३)
पण्डित अम्बिकादत्त तथा त० त० त० ननीताल	१)
बाबू हरदत्त जी उपाध्याय ... ... नयनीताल	१)
पण्डित चेतराम शर्म्मा ट्रेज़री क्लर्क ... ... नयनीताल	१)
पं०—छेदालाल जी ओझा ... ... नयनीताल	१)
लाला बलदेव सहाय कानूनगो तहसील सतारगंज	१)
श्री उत्तम सिंह जी राणामानूरवाल	॥)
पं० भवानीदत्त पाठक दूकानदार ... नयनीताल	।)
श्री जयीलाल स्वर्णकार ... ... नयनीताल	।)
श्री नित्यानन्द जोषी विद्यार्थी विक्टोरिया स्कूल	।)
श्री माधवप्रसाद जी तिवारी ... ... कलकत्ता	२)
लाला दुर्गाशाह गुप्त दूकानदार ... ... नयनीताल	१)
पं०—सोहन लाल शर्म्मा जैमिनी ... ... भऊँ	॥।=)
लाला दुर्गाशाह जी सब ओवरसियर ... ... नयनीताल	१)
पं०—भवानीदत्त जोषी मुलाजिम नवाब रामपुर	१॥)
योग	२०॥=)

अधमोद्धारक ॥

प्रजानाथ परमेश्वर की प्रेरणा से पण्डित रमादत्त त्रिपाठी मन्त्री आर्य्यसमाज नैनीताल ने लोकोपकारार्थ स्वर्गवासी महर्षियों के वाक्यों का सारसंग्रह किया ॥

और

पं० अम्बिकादत्त बहुगुणासरिश्तेदार अदालत असिस्टेन्ट कमिश्नरी नयनीताल तथा पं० शंकरनाथ शुक्ल शास्त्री ब्रह्मावर्त्त निवासी आदि द्रष्टा श्रोता सज्जनों के परामर्श से ॥

सरस्वतीयन्त्रालय-इटावा

में

भीमसेनशर्मा द्वारा छपाया

संवत् १९५४ वि० ता० १३ । ३ । ९८ ई०

प्रथमवार ५००]   [मूल्य ।)